असल और नकल, नूर और छाया साथ-२ चलते हैं। इस नूर (प्रकाश) के साया का नाम "चाँद" है। फिर अपनी बारी पर चाँद ने सूरज से इकतसाब (हासिल) नूर किया। उससे जो दूसरी हालत पैदा हुई वो नूर और साया की मशमूली (सांझी) कैफियत थी। उसका नाम "मंगल" हुआ। इस मंगल की जिस्मानियत (शारीरिक) और मादियत चाँद के अन्सर की है और प्राण या रूह सूरज की है। जहाँ रूह और माद्दा इकट्ठा होते हैं उसी को मंगल बोलते हैं। वहाँ धार नीचे की तरफ रुजू होती है क्योंकि संस्कृत में मग कहते हैं "चलने" को। अब इस मंगल ने चाँद से मादियत प्राप्त की। उससे जो अन्सर पैदा हुआ उसका नाम है "बुध" या "बुद्धि"। कुदरत में यह चौथा तत्त्व है। जहाँ सूरज और माद्दा इकट्ठे हुए बुद्धि या अक्ल पैदा हो जाती है। स्त्री और पुरुष के रज और वीर्य को चाँद की मादियत और सूरज की रूहानियत के साथ निस्बत है। लड़का जब गर्भ में आता है उसी वक्त पहिला अन्सर बुद्धि का उसके अन्दर पैदा होता है। फिर और कामकाज होने लगता है। इसके बाद जिस वक्त कि उस बुद्धि ने मंगल के साथ सम्बन्ध पैदा किया इस सम्बन्ध से जो धार निकली उसका नाम "बृहस्पति" है। यह और कुछ नहीं है ज़बान है। बुद्धि का इज़हार (प्राकट्य) हमेशा ज़बान से होता है। बुद्धि आधार बनती है और ज़बान उसकी धार होती है। अब इस ज़बान ने बुद्धि से सम्बन्ध पैदा किया, उससे जो धार निकली उसका नाम "शुक्र" है। शुक्र कहते हैं वीर्य को। शुक्र या वीर्य का अन्सर ज़बान के बाद पैदा होता है। संस्कृत में बृहस्पति दो शब्दों से बना है। "बृहत्" कहते हैं बड़ाई को। "पति" कहते हैं मालिक को। फजीलत के मालिक का नाम बृहस्पति या ज़बान है। इसी से शक्ति का

इज़हार होता है। इसीसे इन्सान के अन्दरूनी जज़बात का और अनुभव का पता लगता है। जब शुक्र पैदा होकर इस ज़बान के साथ सम्बन्ध पैदा करता है तब उससे "शनि" या "शनैश्चर" तत्त्व पैदा होता है। इसको कुव्वते हरकात या सकनात बोलते हैं। जब तक शुक्र न हो तब तक हरकात और सकनात में ताक़त का होना मुश्किल है। चलना-फिरना, काम करना सब उसके आधीन है। शुक्र संस्कृत में वीर्य को कहते हैं। यह इस शरीर का बादशाह कहलाता है। जो शख्स इस वीर्य या शुक्र को नष्ट नहीं करता उसका नाम धीर, बलवान्, तेजस्वी, तेजमय और तेजवान् है। जो इस धीर्य को नष्ट करता है वह कंगाल होता है और उसका नाम निर्बल, बलहीन, तेजहीन और निस्तेज है।"

ऋषि इस उत्तर को सुनकर बहुत खुश हुए और शिव और पार्वती को नमस्कार करके अपने-२ स्थान चले गये।

सत्संग परम दयाल

फ़क़ीर चन्द जी महाराज

नई दिल्ली 26-9-71

शब्द

मुसाफिर तुम रहना होशियार ।
ठगों ने आन बिछाया जाल ।।
अकेले मत जाना इस राह ।
गुरु बिन नहीं होगा निर्वाह ।।
जमा सब लेंगे तेरी छीन ।
करेंगे तुझ को अपना दीन ।।
ठगों ने धोका सब संसार ।
गुरु बिन पड़ गई सब पर धाड़ ।।
मान लो कहना मेरा यार ।
संग इन तजना पकड़ किनार ।।
गुरु बिन और न कोई रखवार ।
कहूं मैं तुम से बारम्बार ।।
होवेगी मंज़िल तेरी पार ।
गुरु से करलो दृढ़ कर प्यार ।।
गुरु के चरण पकड़ यह सार ।
इन्द्रिय भोग भुलावत झाड़ ।।

यही हैं ठगिया करत ठगार ।
कहैं राधास्वामी तुझे पुकार ।।
शरण में आजा लेऊँ संभार ।
नाम संग होजा होशियार ।।

मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि तूने यह स्वांग क्यों बनाया ? इससे क्या लाभ है ? मैं छोटी आयु से राम को, भगवान् को या कृष्ण को मानने वाला था । मेरे मन में एक खोज थी । अपना आपा कुछ इच्छा करता था या दूसरे शब्दों में मेरे अन्दर में कुछ कुरेद थी । इसी क्रम में मौज ने मुझको दाता दयाल (गुरुदेव) हुजूर महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज के पुनीत चरणकमलों में पहुँचाया । उन्होंने मुझे राधास्वामी मत अथवा गुरु मत की ओर चलने को कहा किन्तु प्रारम्भ में ही मैंने ऐसी वाणियाँ सुनीं जिनमें सबका खंडन था । यह बातें मेरी चित्तवृति के प्रतिकूल थीं किन्तु गुरु की आज्ञा थी कि तुम इस पन्थ पर चलो । मैंने उन दिनों प्रण किया था कि जो कुछ मुझे इस पन्थ पर चलने से प्राप्त होगा अथवा जो कुछ मेरा अनुभव होगा वह मैं संसार वालों को बता जाऊंगा । यही कारण है कि मैं यह सत्संग का कर्म कर रहा हूँ ।

तुमने यह शब्द सुना है, दुनिया क्या कहेगी ? तुम सभी लोग गुरुओं के अनुयायी हो । कोई हुजूर बाबा सावन सिंह जी महाराज को, कोई सन्त कृपालसिंह जी महाराज को, कोई महर्षि जी महाराज को, कोई मेहता जी महाराज को और कोई निरंकारी जी महाराज को मानता है । परन्तु मेरे अनुभव में यह बात आई है कि हम जितने देहधारी गुरु हैं इनमें अधिकतर धन बटोरने वाले लुटेरे या ठग हैं । मैं यह बात क्यों कहता हूँ कि ये सब लुटेरे या ठग हैं ? क्योंकि मैंने गुरु बनकर देख लिया है । मेरा रूप लोगों के

अन्दर में अफ्रीका में अमरीका में और हिन्दुस्तान में प्रकट होता है। किसी को औषधि बताता है, किसी को जागृत में प्रश्नपत्र हल करवाता है, किसी को मरते समय ले जाता है और उन्हें यमराज के पंजों से छुड़ाता है। अभ्यास के समय दर्शन देता है! उदाहरणार्थ यहां कृषक जी उपस्थित हैं—इनके साधन अभ्यास को मेरे रूप ने पुर्ण कराया। वास्तव में मैं इन कर्मों का कर्त्ता नहीं होता।

इस वास्ते जिन महात्माओं ने संसार में ऐसे भोले लोगों को ऐसी बातों के आधार पर उनकी सम्पत्ति लूटी है उनकी लाज ली है! अपने आश्रम, डेरे, धाम बनाये हैं या मोटरकारें खरीदी हैं अथवा सांसारिक सम्पत्ति अर्जित की है। क्या वे लोग लुटेरे या ठग नहीं हैं? मेरे निजी अनुभवानुसार इनमें से कोई भी उन पर विश्वास करने वालों के अन्दर प्रकट नहीं होता। इस अनुभव के आधार पर मैं ऐसे गुरुओं को ठग कहने के लिए विवश हूँ। मैं समय का सन्त सद्गुरु तथा ज्ञानदाता हूँ इसी कारण से मैं निर्भयतापूर्वक यह बात कह रहा हूँ। यही इस बाणी का सार है—

मुसाफिर तुम रहना होशियार।
ठगों ने आन बिछाया जाल॥

क्या मैं असत्य भाषण करता हूँ? मैं राधास्वामी दयाल का अवतार हूँ। अब आप सज्जन मुझसे यह आशा न करें कि मैं असत्य बोलूंगा। मैं गुरु नानक व कबीर का अवतार हूँ। तात्पर्य यह है कि जो शिक्षा ये महान् अनुभवी सन्त दे गये हैं वही मैं भी इस समय दे रहा हूँ। अनेक व्यक्तियों का कथन है कि बाबा आप हमारे स्वप्न में आये—बिम्बो (मिसेस एच० एस० गुप्ता) कहती है कि जब मैं आपकी मूर्ति के सम्मुख खड़ी होती हूँ यह मूर्ति मुझसे बात करती है। भूपसिंह कहते हैं कि दस-बारह वर्ष हुए, वह

आत्महत्या करने को गये थे। मैं वहाँ पहुँचा और कहा जाग ! जाग ! जाग ! वह यह भी कहता है कि मैं यह कहकर गगन मंडल को चला गया और तारा बन गया। वास्तविकता यह है कि मैं कहीं नहीं गया और न उसको कहा। अब यह भूपसिंह मेरे वश में है। दूसरों के अनुसार अगर मैं सत्यता न बताता तो इससे तथा औरों से पैसा बटोरता, मान, धन लेता। तो ऐसी अवस्था में क्या मैं ठग नहीं होता ! यह जितने रूप व दृश्य अन्दर में प्रकट होते हैं और तुम्हारे ध्यान को अपनी ओर आकर्षित करते हैं ! क्या यह ठगों का काम नहीं करते हैं ? तुम्हारी माँ, पत्नी तुम्हारे ध्यान को अपनी ओर बंटाते हैं। क्या यह ठग नहीं हैं ? अभिप्राय यह है कि सब लोग ठग हैं। मित्र, परिवार सभी ठग हैं और जो-२ अपनी ओर ध्यान बंटाते हैं वह सभी ठग हैं। अब तुम्हीं बताओ कि यह सब ठग नहीं हैं ? क्या मेरे बचन असत्य हैं ? स्वामी जी महाराज अपनी बाणी में कहते हैं—तुम गुरु को अपने साथ लेकर चलो और ऐ मुसाफिरो ! तुम सावधान रहना। तुमको जिस गुरु को साथ लेकर चलना है वह ज्ञान गुरु है। असली बात तो कोई समझता नहीं है। सारा संसार भेड़चाल चला जा रहा है इसलिए सभी ठगे जा रहे हैं।

मेरी स्पष्टवादिता से मुझे कोई धन नहीं देता है, न दे, मुझे कब धन की चिन्ता है। तुम अन्यत्र देखो, रुपयों से बोरियाँ भरी जा रही हैं। मैं तो संसार में अवतार लेकर आया हूँ। मुझे तो स्पष्टवादिता से काम लेना है। गीता में श्री कृष्ण भगवान् कहते हैं—

"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।"

'जब संसार में ग्लानि उत्पन्न हो जाती है मैं आकर सुधार करता हूँ।' इसी प्रकार सन्तों का अवतरण भी होता

है। अज्ञान, भ्रम और शंकाओं को दूर करने के लिए होता है। इस कलियुग में सन्त अवतार धारण करके आते हैं। अब गुरु कौन हुआ ? गुरु है एक मात्र ज्ञान ! ज्ञान से अज्ञान, भ्रम और शंकाएँ दूर होती हैं।

बाणी में भी कहा है :—

'गुरु खोजो री जगत् में, दुर्लभ रतन यही'

आप लोग खोज करो और अवश्य खोजो। जो प्रयत्न करेगा वह सफलता प्राप्त करेगा, किन्तु संसारी लोग उनको ढूंढ़ते हैं जिनके पीछे अनेकों लोग लगे हुए होते हैं। चाहे लूट-खसोट में ही क्यों न लगे हों ! कहा है :—

फूटी आंख विवेक की, लखै न सन्त असन्त।
जिनके संग दस बीस हैं, इनका नाम महंत ॥

वह ज्ञान गुरु ज्ञान से मिलेगा। वह मिलेगा किसी बाहरी मनुष्य रूपधारी सतगुरु की संगत से। तुम उनकी संगत करो व उनके पास बैठो, उनकी सेवा करो, पूजा करो। तो यह सेवा क्या है ? तुम समझते हो कि फकीर बाबा आया है। इसे दो हज़ार रुपया भेंट कर दो। मानवता मन्दिर में एक कमरा बनवा दो या फकीर बाबा के मुँह में अंगूर ठूंस दो या उसे पांच-सात सब्ज़ियां बनाकर भोजन करा दो। ठीक है। किन्तु यह निम्न कोटि की सेवा है। वास्तविक सेवा राधास्वामी मत में निम्नानुसार है।

कहा है :—

दर्शन करै वचन पुनि सुनै।
सुन सुन कर नित मन में गुनै ॥
गुन गुन काढ़ि लेय तिस सारा।
काढ़ सार तब करै अहारा ॥
कर अहार पुष्ट हुआ भाई।
जग भव भय सब गये नसाई ॥

अब दाना दयाल की वाणी निकालो। वह कह गये हैं जाकर गुरु के निकट बैठो और उनके वचनामृत श्रवण करो। जो सुनो उस पर विचार करो। जो विचारो वही गुनो किन्तु तुम लोग यह नहीं कर सकते। क्यों? तुम गुरु के निकट इस हेतु से नहीं जाते हो कि तुम अपने घर जाना चाहते हो। कोई तो गुरु के निकट इसलिए जाता है कि उसे रोग है इससे छुटकारा हो जावे। दूसरा टी. बी. दूर कराने जाता है। तीसरा कहता है पुत्र नहीं है, तात्पर्य तुम गुरु के निकट भौतिक पदार्थों के हेतु से जाते हो। तुम आत्मिक ज्ञान के लिए नहीं जाते। और मेरे ऐसे भौंदू गुरु भी हैं जिनके प्रसाद से किसी को पुत्र प्राप्ति हो जाती है, किसी का कार्य सिद्ध हो जाता है, किसी को सम्पत्ति प्राप्त हो जाती है, किसी का कोई केस निबट जाता है। वह ऐसी स्थिति में बाबा फकीर का ढोल पीटते फिरते हैं। कहां सन्त मत की ऊँची शिक्षा और कहां यह वर्तमान गुरु मत। इन दोनों में भूमि और आकाश का अन्तर है।

गुरु बाणी में कहा है :—

गुरु के निकट जाओ। वचन सुनो। उन पर विचार करो और आचरण में लाओ। आचरण का उत्तम आहार तुम्हें पुष्ट बना देगा और तुम साक्षात्कार को गुरु की संगत से प्राप्त कर लोगे। ज्ञान प्राप्त हो जायेगा। जब तक सत्संग न हो तब तक मोह, मद, अहंकार नष्ट नहीं होगा। किसी वस्तु का विश्वास कर लेना मान है और मद अहंकार को कहते हैं। जब तक किसी पूर्ण गुरु का मेल न हो, तब तक कोई व्यक्ति अपने घर नहीं पहुँच सकता। मैं समझता हूँ कि मैं मूर्ख और अज्ञानी हूँ कि जो इस सच्चाई को बता रहा हूँ। इसके अधिकारी कौन हैं? इसलिए मैं मूर्ख हूँ जो इस सत्य को प्रकट कर रहा हूँ। अब तुम्हीं बताओ जो लोग

मेरे तथा अन्य गुरुओं के पास जाते हैं क्या वे सांसारिक सुख और अन्य आशाओं को लेकर नहीं जाते हैं ? यह एकदम अधिकारी नहीं हैं। वाणी के अनुसार नाम उनको प्राप्त होता है।

"विषयों से जो होय उदासा"

आजकल हम गुरुओं ने मनुष्य समुदाय को ठगने के लिए यह प्रणाली प्रारम्भ की है। यहाँ कौन है नाम का अधिकारी ! सब लोग भौतिक वासनाओं को लेकर गुरुओं के पास जाते हैं। तुम्हारी इच्छाएँ अवश्य पूर्ण होंगी किन्तु तुम अपने घर नहीं जा सकोगे। अब मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं कि क्या तूने साक्षात्कार किया है जो इस प्रकार सत्संग कराता है ? सत्य तो यह है कि जब से तुम लोगों के चरणों की मिट्टी मेरे सिर पर आई है मेरी आँख खुल गई है। मैं किसी के अन्दर प्रकट नहीं होता हूँ। इसका तात्पर्य यह हुआ कि अपने अन्दर में उत्पन्न होने वाले रूप, विचार, भाव केवल कल्पनाएँ हैं। मेरी सुरत अब इनकी तरफ नहीं जाती है। ये रूप विचार, भाव उत्पन्न अवश्य होते हैं, किन्तु मेरा ध्यान इस ओर नहीं जाता। ऐ फकीर चन्द तू आरतियाँ करवाता फिरता है क्या किसी को सतज्ञान भी देता है ? सतज्ञान को ढूंढने वाला ही कौन है ? यदि अधिक भावना होगी तो कह दोगे चलो मेरे घर। मुझे अपने घर लेजा कर क्या करोगे ? क्या ऐसा करने से तुम्हारा बेड़ा पार हो जायेगा ? क्या तुम सतलोक पहुँच जाओगे ? मित्रो ! सतलोक या अपने घर तुम तब पहुँचोगे जब मेरे वचनों को सुनकर अनुभवी हो जाओगे। स्वामी जी महाराज ने या दाता दयाल ने तुमको अपनी वाणियों के द्वारा समझाया है। उन्होंने अपने ढंग से समझाया है :—

स्वामी जी महाराज कहते हैं :—

देखो गगन के बीच, श्याम कुंज खिल रहा।
भौंरा गया लुभाय, वहीं चढ़के पिल रहा॥

श्यामकुंज तुम्हारा अपना मन है और भटकता रहता है और दृष्टि में आने वाली वस्तुएँ भी तुमको ठगती रहती हैं। मैंने स्वयं इसी पागलपन में अपने जीवन का अधिकांश व्यतीत किया है। जब यह पता लगा है कि मैं किसी के अन्दर नहीं जाता हूँ और यह सब मन का प्रभाव है जो दृष्टि में आता है तब से मैं इन ठगों से बच गया हूँ। जो कुछ अपने अन्दर दृष्टिगोचर होता है सब धोखा है। मुझे पर्याप्त समय तक इस धोखे का पता नहीं हुआ था, जैसा कि मैं अनेक बार कहता हूँ यहाँ पर अनेक व्यक्ति भी कहते रहते हैं कि बाबा फकीर मरते समय ले जाता है, वह यह करता है, वह करता है सब गलत है। मैं तो उस समय होता नहीं हूँ, जो कुछ वे देखते हैं वह सब ठगी ही तो है। लोग यूं ही कहते हैं कि बाबा करनी वाला है। ये और दूसरे महान् पुरुष उनके अन्दर में दर्शन देते हैं वे बड़ी करनी वाले हैं। वे दवाइयाँ बतलाते हैं, दर्शन देते हैं और तुम नाचने लग जाते हो। गुरु का रूप देखकर तालियाँ बजाते हो। यह वह करते हो किन्तु सच्चाई यह है कि यह सब माया, छल, धोखा है। काल इस प्रकार की घटनाएँ दिखाता है और अनेक प्रकार के जाल बिछा रहा है। गुरु बाणी के अनुसार बिना सतगुरु के वह सबको निगल रहा है।

जब मैं यह कहता हूँ कि मैं राधास्वामी दयाल हूँ। आप लोग यह समझो कि मैं बात सत्य कह रहा हूँ। राधा-स्वामी शब्द स्वरूप है। जो ज्ञान वे दे गये हैं वोही ज्ञान हमारे ऋषि-मुनि भी दे गये हैं। बहकाने वालों को ऋषियों ने छाया पुरुष का नाम दिया है, सन्तों ने इसे काल पुरुष कह दिया है। शब्दों का ही तो अन्तर है। देखता हूँ कि सब लोग सन्तमत की शिक्षा के योग्य नहीं हैं। फिर भी

मैंने सन्तों की शिक्षा को पूर्णतया स्पष्ट कर दिया है। इसलिए कि भूले-भटके लोग फायदा उठा लें और रास्ते पर आ जायें।

सर्व-साधारण तो अधिकारी नहीं हैं फिर भी उन्हें बुला-बुलाकर नाम की ओर खींचा जा रहा है। सब डेरे, धाम और मठ वाले चेले बनाने में लगे हुए हैं। गुरु मत क्या हुआ मानो दुकानदारी है। एक पत्थर उठाओ और गुरु गद्दियाँ इसमें से निकलती हैं। ये सब लोग क्या कर रहे हैं? चेलों के द्वारा मन्दिर-मठ बनवा लें, जागीरें खड़ी कर लें या अपने लिए मोटरकारें खरीद लें और क्या कर रहे हैं कोई सच्ची बात तो बताता नहीं है। सम्भवतः वे भी सच्चाई से अनभिज्ञ होंगे। अज्ञानी चेले गुरु के नाम का ढिंढोरा पीटते हैं। कई तो गुरुओं की दलाली करते हैं। इस दुर्दशा को देखकर, फकीर के चोले में अनामी धाम से मैं आया हूँ और यह बताने कि सच्चाई क्या है?

यह संसार कर्म क्षेत्र है। यहाँ तो अन्त में सत्य की ही विजय होती है। हम संसारी लोग स्वार्थ के लिए कितनी हेराफेरी कर रहे हैं? इसी प्रकार अपने स्वार्थ और उद्देश्यों की पूर्ति हेतु यह राजनैतिक दल वाले क्या कुछ हेराफेरी नहीं कर रहे हैं। सर्वसाधारण यह आशा करते हैं कि इन मतों पर चलने से उनको सुख, शान्ति प्राप्त होगी, किन्तु मेरी दृष्टि में जो आ रहा है वह यह है कि जितना धोखा, जितनी चालाकी, मक्कारी इन पन्थों में है इतनी मलीनता और कहीं नहीं होगी। इतने पन्थ और धर्म भारतवर्ष में और सारे विश्व में हैं। इनके मानने वालों के होते हुए भी मानव जाति का कितना बुरा हाल हो रहा है। यह सब मत-मतान्तरों के दोषपूर्ण वातावरण के कारण है। पश्चिमी बंगाल में क्या हो रहा है? कहीं भचाल है, कहीं बाढ़ें हैं

और कहीं और प्रकार की आपत्तियाँ हैं। यह सब अपने ही कर्मों का फल है। इसको देखकर प्रकृति ने मेरे मस्तिष्क को झकझोर दिया है। इस कारण मैं सच्चाई प्रकट किये जा रहा हूँ। मेरा काम मार्गदर्शन का है। यही बात सभी ऋषियों ने और दाता दयाल ने भी बताई है। लोग मानते कब हैं। प्रत्येक स्थान पर यही दशा है। फिर भी चूंकि मुझे आज्ञा है :

जीव तीन ताप से दुःखी हैं, इन पर दया करो ! इसलिए मैं यह सत्संग का काम कर रहा हूँ। कई समय विचार आता है कि यहाँ सच्चाई बता कर दुश्मनी मोल लेना है। मेरी खरी-खरी बातों से इन मत वालों की हेराफेरी पर प्रभाव पड़ता है और इनके हलवे-मांडे में कमी आ जाती है।

गुरु के देश में पहुँचना कोई सहज कार्य तो नहीं है। तुम लोग वहाँ तब जा सकोगे जब तुमको अपने मन की हेराफेरी का पता लग जायेगा। तुम्हारे मन में कितनी वासनाएँ भरी रहती हैं और उठती रहती हैं; कितनी इच्छाएँ उत्पन्न होती रहती हैं, कितने दृश्य आते हैं। ये सब ठग हैं। यह सब माया-जाल है और यही छाया पुरुष के कारबार हैं। जब तक यह सच्ची बात तुम्हारी समझ में न आये, तुम अपने घर लौट न सकोगे। इन मायावी वस्तुओं में सच्चाई नहीं है।

नक्कारखाने में तूती की आवाज़ भला कौन सुनता है। इसी प्रकार मेरी बाणी को भी समझो। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि मेरी सच्चाई से किस श्रेणी का परिवर्तन विश्व में आयेगा। परिवर्तन नहीं आता है तो भी मैं गुरु ऋण से उऋण होने के लिए सतत पुकार करता रहता हूँ।

कहा है :—

"मुसाफिर रहना तू हुशियार, ठगों ने जाल बिछाया है।"

मैं लोगों को उपदेश करता रहता हूँ, किन्तु जिनका मन वश में नहीं है वह आगे कैसे जा सकते हैं। तुम स्वयं विचार कर लो कि जब मेरे ही मन में ऐसे-२ विचार उत्पन्न होते रहते हैं जिनको मैं अच्छा नहीं समझता हूँ और न चाहता हूँ तो औरों की क्या गति होगी? ऐसी स्थिति में प्रश्न उत्पन्न होता है कि इस शिक्षा का लाभ ही क्या है? हां, लाभ यह है कि यदि किसी को यह ज्ञान हो जावे कि उसके मन में उठने वाले संकल्प मात्र माया हैं तो उनका प्रभाव उसके चिदाकाश पर नहीं बैठेगा। स्पष्ट यह है कि कर्म का कानून इसके लिए निष्फल हो जायेगा। यह कहा गया है कि ज्ञानाग्नि से कर्म भस्म हो जाते हैं। यह वास्तविक बात है। जब यह खेल झूठा ही समझ लिया गया तो पहले कर्मों का प्रभाव तो अवश्य होगा किन्तु ज्ञान के उत्पन्न होने के पश्चात् कर्मों का प्रभाव कुछ भी नहीं होगा जबकि वास्तविक रूप से ज्ञानी बन गया हो। पिछले कर्म तो सब को भोगने पड़ते हैं, चाहे कोई जागृत में भोग ले या स्वप्नावस्था में भोगे। ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् संकल्प का प्रभाव चिदाकाश पर अंकित न होगा। अन्तर्मन पर जो पूर्व के संस्कार हैं उनका प्रभाव होता है। मुझ पर भी होता है।

मेरी यह दशा है कि स्वप्न में प्रायः रेलगाड़ियां देखने में आती हैं। इसका कारण यह है कि मैंने रेल के विभाग में वर्षों तक मन से काम किया है। यह कार्य निजी स्वार्थ के लिए था। स्वप्न में मुझे कभी मानवता मन्दिर, पीरेमुर्शा, मामचन्द या मोहनलाल नैय्यर देखने में नहीं आते क्योंकि मैं अब वास्तविक तथ्य को समझ गया हूँ और जल में कमल की तरह रहने का जीवन गुजारता रहता हूँ। ऐसी स्थिति होने पर भी रेलगाड़ियाँ अब भी सुपने में मेरी जान खाती

रहती हैं। इन्हीं कारणों से कहा गया है कि ऋषि-मुनियों को भी अपने कर्मों के फल भोगने पड़ते हैं।

तुमको ज्ञान-स्वरूपी गुरु तक पहुँचना है। इसके लिए मन को एकाग्र करना है। ऐसा करने के लिए सुमिरन तथा ध्यान का पाठ दिया जाता है। इससे यह होता है कि मानव मन के चक्कर में नहीं आता है। सुमिरन और ध्यान से मन अनावश्यक विचार तथा संकल्प नहीं उठाता है।

तुम्हारी सहायता कौनसा गुरु करेगा? सुमिरन और ध्यान और गुरु का ज्ञान। जब-जब मन में कोई संकल्प उठता है, यदि गुरु ज्ञान प्राप्त हुआ है तो उसका प्रभाव मन व मस्तिष्क पर नहीं होगा। इसके अतिरिक्त सुमिरन और ध्यान के अभ्यास से अनावश्यक विचार मन में नहीं उठेंगे। मुझे जब स्वप्न में रेलगाड़ी और टेलीग्राफ से काम पड़ता है, तुरन्त ही यह विचार आ जाता है कि यह तो स्वप्न है। उस समय मैं शब्द और प्रकाश में चला जाता हूँ। दाता (गुरुदेव) ने मुझे ऐसा ही करने को कहा है किन्तु मेरा प्रेम उनके साथ भावुकता का था। वह अज्ञान का प्रेम था, इसी हेतु से कहा गया है:—

कर सत्संग विवेक के साथ।
तेरे शीश रहे गुरु हाथ॥

बाबा फकीर ने तुम्हारे मस्तक पर हाथ रख दिया, क्या इससे तुम सतलोक पहुँच जाओगे? नहीं, कदापि नहीं! तुमको सत्संग विवेक व समझ-बूझ से करना पड़ेगा। यही कारण है कि मैं सत्संग पर विशेष बल देता हूँ। मैं सन्त मत का भेद खोल चला। उपनिषदों को बहुतों ने पढ़ा है। दाता दयाल जी ने, और बहुतों ने उपनिषदों पर लिखा है। यह सब सैन-बैन अथवा संकेतों में है। मैंने तो डण्डा हाथ में लेकर सच्चाई को प्रकट कर दिया है। जिनको आवश्यकता

हो वे मेरे सत्संग में आवें और लाभान्वित हों। जो इसका नंगा चित्र देखने से भयभीत होते हों वे लोग मेरे पास न आयें। प्रायः साधारण गुरु लोग प्रथम तो धन हरण करते हैं। क्या उन्होंने तुमको दीन नहीं बनाया हुआ है? कई लोग मेरे पाँव को अपनी जिह्वा से चाटते हैं। क्या ऐसा करने से वे लोग दीन नहीं बनते? एक स्त्री रोती हुई मेरे पास आई है। यह क्या दशा है? सत्संग के न होने से मानव की यह दशा हुई है। ऐ सत्संगियो, गृहस्थियो! मैं तुम्हारे लिए आया हुआ हूँ। क्या रखा हुआ है इन लुटेरे गुरुओं के पास! तुम लोग अब सोचो, यह सब दुकानदार हैं। इनसे तुम सावधान रहो और बात को समझने का प्रयत्न करो।

मैं आज शाहदरा-दिल्ली गया। किसी के घर की नींव रखनी थी। उसको मुझे ले जाने में पचपन रुपया व्यय हुआ। दो कारों का किराया आने-जाने का और ग्यारह उसने मुझे भेंट किये किन्तु मैंने उन रुपयों को स्पर्श भी नहीं किया। क्यों? तुम सोचो! यह व्यक्ति बेवकूफ है। थोड़ासा वेतन मिलता है, इससे क्यों लूँ। वह तो स्वयं दीन बना हुआ है। वह समझता है बाबा फकीर की खुशामद करने से कुछ मिल जायेगा। तुम लोग भूले हुए हो। ऐसा करने से क्या बनता है? मेरी कही बातों पर चलने से ही कुछ बनेगा। रुपया देने से यह वस्तु (ज्ञान) प्राप्त हो जाती तो बड़े-बड़े धनी लोग बिरला जैसे इसे क्रय कर लेते।

मैं यहाँ आया हूँ। पता लगा है कि दशहरा पर लंगर लगाया जायेगा। इनकी इच्छा। सलवान साहिब समझदार हैं, इनका भला हो, जो सत्संग तथा निवास के लिए बिना पैसे लिए स्थान दे देते हैं। कोई-कोई मनुष्य समझकर दान देता है।

मेरे सत्संग में खरी-खरी बातें होती हैं। यदि तुम्हारा

मन मेरी खरी बात सुनने की आज्ञा देता है तो तुमको अवश्य ही मेरे सत्संग से लाभ होगा।

ऐसी दशा में बेशक मेरे विचारों का प्रचार किया करो जिससे गृहस्थी लोग उस लूट से बच जायें। केवल इसी विचार ने कि अन्त समय में गुरु जीव को ऊँची अवस्था में या सतलोक में ले जाता है, करोड़ों रुपया गुरुओं को दिया जाता है। बाबा चरण सिंह जी, नन्दू भाई जी तथा अन्य लोग इस तथ्य को अवश्य स्वीकार करते हैं कि वे अपने चेलों के अन्दर नहीं जाते हैं किन्तु वे स्पष्टतया जनता को इस बात को प्रकट नहीं करते हैं। कारण इसका यह है कि आर्थिक हानि होती है और मान-सम्मान में कमी होने का भय होता है।

वह कौन गुरु है जो सही रूप में चेले की सहायता करता है? वह है सुमिरन और ध्यान अर्थात् गुरुस्वरूप का ध्यान और नाम। यदि गुरु का स्वरूप अपने अन्दर में प्रकट होता है तुम उससे बातें न किया करो। ऐसा करने से तुम्हारा मन बहक जायेगा और तुममें कमजोरी आ जावेगी। यह याद रखिये कि कोई बाहर का गुरु तुम्हारे अन्दर प्रवेश नहीं करता है। यह तुम्हारे अपने ही विचार की उपज है। यह मेरा सन्देश है। इसे भली प्रकार से तुम अपने मस्तिष्क में रख लो। तुम लोग मूर्ख हो। यह समझते हो कि कोई बाहर का गुरु तुम्हारे अन्दर चला जाता है। तुम ध्यान इसलिए किया करो कि तुम्हारा चित्त एकाग्र हो जावे और तुम्हारी इच्छाशक्ति बलवती हो जावे। इस साधन से तुम्हारी इच्छाएँ पूर्ण हो जावेंगी। शक्तिशाली इच्छाएँ ही मानव को सफल बनाया करती हैं।

मलिक साहिब (जे० आर० मलिक) कोकाकोला वाले को सम्बोधित करते हुए कहा—मलिक साहिब! मैं कहता हूं मेरे भाषण छपवा दो, यही मेरी सेवा है। मैं संसार को

नाम नहीं देता हूँ, क्योंकि मैं नाम देने को अपराध समझता हूँ। इसलिए कि अनधिकारी व्यक्ति नाम के द्वारा वह स्वयं को और अन्यों को हानि पहुँचावेगा। इसके समाधान की आवश्यकता हो तो राय सालिगराम जी साहिब की बाणी पढ़कर सन्तोष कर लीजिये।

यदि गंजे को नाखून मिल जावें तो वह अपना सिर खून में कर लेगा। अनधिकारी व्यक्ति भी नाम को पाकर अवश्य ही अपना नुकसान करेगा यह निश्चित है। जो व्यक्ति सुमिरन, ध्यान करता है उसकी इच्छाएं पूरी हो जाती हैं। नाम का यह प्रभाव है। अनेक अज्ञानी व्यक्ति भी यह इच्छा रखते हैं परन्तु उनकी अनुचित इच्छाओं, विचारों, वासनाओं से उनकी हानि हो जाती है। मैं सत्संग कराता हूँ और साथ ही यह चेतावनी देता रहता हूँ कि शिव संकल्प या शुभ विचार रखो अन्यथा जबलपुर वाली स्त्री की सी गति हो जायेगी। जबलपुर वाली स्त्री की घटना यह है कि वह एक समय मेरे पास फिरोज़पुर में आई। वह त्रिकुटी में अभ्यास किया करती थी जिससे उसकी इच्छाएं प्रबल हो गई थीं। उसके तीन बच्चे थे। पति उसका अत्यन्त व्यस्त रहता था। अपने बच्चों की पूर्णतया देखभाल नहीं कर सकता था। वह स्त्री यह चाहती थी कि इन बालकों की देखभाल से बच जाये। एक दिन उसने मुझसे कहा कि मैं उसके पति को कह दूं कि बच्चों की देखरेख पति किया करे। यह वलीराम जी हकीम के सामने की घटना है। मैंने हकीम साहिब से कहा कि यह स्त्री क्या चाहती है? मेरा ज्ञान कहता है इसके तीनों बच्चे शीघ्र ही मर जायेंगे। हकीम वलीराम साहिब तो डर गये। किन्तु वास्तविकता यह है कि एक ही वर्ष में उस स्त्री के तीनों बच्चों की मृत्यु हो गई। तब से मैंने नाम देना बन्द कर दिया है। वह स्त्री

अपने बच्चों से छुटकारा चाहती थी तथा उसका पति बच्चों की देखभाल नहीं कर सकता था। छुटकारे का यही एकमात्र हल था कि बच्चे मर जायें। यह प्रार्थना उसने की और पूरी हो गई।

नाम अनधिकारियों को खा जाता है। और सन्त हैं जो इस विचार से नाम देते हैं कि उनके डेरे बन जायें। इसलिए इनकी मनोकामनाएँ पूरी हो जाती हैं। मैं अगर किसी को नाम देता भी हूँ तो मेरी यह नीयत रहती है कि दुःखी जीव सुखी हो जायें। जिनके मन मलीन हैं और दुर्विचारों को रोक नहीं सकते हैं, आवश्यक है कि नाम से उनकी हानि हो। हमारे शास्त्र भी ऐसा ही कहते हैं। शास्त्रों के अनुसार शूद्र के कानों में रुई भर देनी चाहिए जिससे ऊँचे दर्जे की बात सुन न सके। यह ठीक है। शूद्र वह लोग हैं जो अनधिकारी हैं। अनधिकारियों को ज्ञान के नाम से क्या गरज है। वो इसे सुनकर इसका अभ्यास करके अपनी और अन्य लोगों की हानि कर देते हैं और कठिनाइयां उत्पन्न कर लेते हैं। नाम इसलिए दिया जाता है कि बुराइयाँ दूर हों। अधिकारी को नाम जपने से लाभ होता है। अभ्यास के समय अन्तर्पट में उत्पन्न होने वाली मूर्ति से बातें कौन करता है? यह याद रहे, न उसके अन्दर बाबा सावनसिंह महाराज प्रकट होते हैं, न सन्त कृपालसिंह जी महाराज प्रकट होते हैं और न बाबा फकीर ही होता है। जो उनके अन्दर में प्रकट होता है, वह गुरुबाणी के अनुसार ठग है। यहाँ पर ठगों ने जाल बिछाया है। वे दृश्य छाया-पुरुष हैं अथवा मायापुरुष हैं। अपने ही दबे हुए संस्कार जाग उठते हैं। वह इन रूपों में उपस्थित हो जाते हैं और मानव व्यर्थ ही में भटक जाता है और यही ठग है। गुरुबाणी में सत्य ही लिखा है।

मेरा अपना यह हाल है कि मुझे अब इस बुढ़ापे में कोई न कोई रोग घेरे रहता है। क्या खबर है अगले वर्ष दशहरे पर आऊँ या न आऊँ। तुम्हारा मन ही गुरु है और मन ही चेला है। दाता दयाल जो ज्ञान के अवतार थे, इस विषय में यों लिखते हैं :—

बाबो यह मन समझन योग।
मन ही ज्ञान और मन ही ध्यान है, मन हो मोक्ष और भोग।
मन में वेद को पढ़ते ब्रह्मा, शंकर करते योग।
मन ही अन्दर सृष्टी व्यापी, मन ही में है रोग॥
मन गोविन्द मन गोरख रूपा, मन ही योग वियोग।
मन ही पानी मन ही अग्नी, मन ही आनन्द योग॥
मन ही गुरु है मन ही चेला, मन ही ब्रह्म संजोग।
मन ही का व्यवहार जगत् में, नाहीं जानें लोग।

ऐसी स्थिति में तुम्हारा गुरु कोन है जिसको मरते समय तुम्हारे साथ जाना है? उसका उत्तर है तुम्हारा मन। इस बाबा फकीर को तुम्हारे साथ नहीं जाना है। बाबा फकीर की संगत से तुमको सच्चा ज्ञान और सच्चा भेद अवश्य मिल सकता है, उस अवस्था में जबकि तुम अधिकारी हो। तुम उस भेद को पाकर अपना बेड़ा पार कर सकते हो और कोई उपाय भवसागर से पार होने का नहीं है। गुरु की केवल यही दया है कि वह तुमको सच्ची बुद्धि देता है, किन्तु तुम गुरु की दया यह समझते हो कि वह तुम्हारा रोग ठीक कर देगा या तुम्हारा मुकद्दमा जिता देगा।

गुरुबाणी में लिखा है कि जब गुरु की दया होती है तब निबलता सारी चली जाती है, दुर्मति दूर हो जाती है और सुमति आ जाती है। यह एकदम सत्य है। गुरु की दया से अनुचित सोचना-विचारना (wrong thinking) दूर हो सकते हैं। यही बाहर के गुरु की दया है। झूठी समझ देने का नाम है

झठी राय देना, झूठा पथ प्रदर्शन करना अथवा झूठा गुरु बनना। जो महात्मा सच्ची समझ नहीं देते हैं, उलटे तुमको अपनी गद्दियों के साथ बाँधने का प्रयत्न करते हैं, वह झूठे गुरु हैं। कहा है :—

गुरु बिन और न कोई रखवार, कहूँ मैं तुझसे बारम्बार।
होगी मंजिल तेरी पार, गुरु से करले दृढ़ कर प्यार॥

मैंने दाता दयाल जी से क्या-क्या खेल खेले हैं। उस समय मैं इनको खेल नहीं समझता था। दाता इस विषय में जो लिखते हैं उसका भावार्थ यह है—"तू काल-जाल से बचेगा, उस स्थिति में जबकि तू विचारपूर्वक गुरु का सत्संग करता रहेगा। गुरु दयाल हितकारी हैं।"

मैं परम दयाल हूँ, अतः स्पष्टतया यह ज्ञान प्रकाशित किया है। औरों ने ज्ञान को स्पष्ट नहीं कहा है। कबीर साहिब धर्मदास को कहते हैं—'धर्मदास तोहि लाख दुहाई, सार भेद बाहर नहिं जाई।' अर्थात् किसी मुख्य अधिकारी को प्रथम मैं वास्तविकता का बोध कराया जाता था, परन्तु मैंने इसे जनता में लुटा दिया है। जिस किसी को लाभ उठाना हो वह उठावे। मैंने अधिकारी व अनधिकारी का भी विचार नहीं किया है और साधारणतया असलियत, ज्ञान, राज या भेद को प्रकट कर दिया है।

आजकल के गुरु ढोल पिटवाते हैं कि हमारे गुरु आने वाली विपत्ति से बचा लेते हैं। जो हमारे आश्रम में आवेगा उसे रोटी, कपड़ा भी मिलेगा। वह यह कर देंगे वह कर देंगे। मैं कहता हूँ कि ऐ मानव! तू किसी मन्दिर या आश्रम में रहने से दुःख या क्लेश से बच नहीं सकेगा। तेरा कर्म तेरे साथ रहेगा। उसके अनुसार तुझे दुःख, सुख सहना ही होगा।

भोले-भाले जीव गुरुओं की चिकनी-चुपड़ी बातों में

फँस जाते हैं, इस दशा को देखकर मैं प्रकट हुआ हूँ। मैं संसार में सच्चाई प्रकट कर रहा हूँ। बाणी में लिखा है— गुरु के चरण पकड़ने से छुटकारा हो जाता है। मैं पूछता हूँ मेरे पाँव पकड़ने से तुम्हारे इन्द्रियों के भोग समाप्त हो जावेंगे ? नहीं, कदापि नहीं। गुरु के चरण प्रकाश हैं। जब तक किसी की सुरत शब्दब्रह्म या प्रकाश को नहीं पकड़ेगी, वह कभी भी अपनी इन्द्रियों को वश में नहीं कर सकता।

दीबानो ! मेरे चरणों को पकड़ने में क्या रखा हुआ है ? इन चरणों में मैल लगी हुई है। इन चरणों में कीटाणु भी हो सकते हैं। इनको व्यर्थ ही छूते रहने से तुम अस्वस्थ भी हो सकते हो। तुम्हारे प्रेम के भाव को मैं मान देता हूँ, किन्तु इसका यह आशय नहीं कि मेरे चरण स्पर्श करने से तुम विपत्तियों से बच जाओगे।

तुमको किसने ठगा है ? तुम्हारी कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों ने तुमको ठगा है। तुम्हारा मन ठग है और हर प्रकार के दृश्य, अलौकिक घटनाएँ ये सब माया हैं। जब तक यह ज्ञान न होगा कि ये सब माया हैं, तुम दुःख और विपत्तियों से बच नहीं सकोगे।

जो लोग यह समझते हैं कि मेरी बाणी में सत्यता है उसे वे ग्रहण करें और उसका वह प्रचार करें। मेरे सन्देश का अधिक से अधिक प्रचार करें जिससे जो वास्तव में अपने घर जाना चाहते हैं उनको सहायता प्राप्त हो सके और बस !

सबको राधास्वामी !

———

सत्संग परमसन्त हजूर मानव दयाल

डा. आई. सी. शर्मा जी महाराज

मिश्रिक तीर्थ 5-3-87

शब्द

तू फकीर है मेरे प्यारे, सुन फकीर की बाणी ।
साधु कहें फकीर को भाई, साधु जग सुखदानी ।।
परउपकारी जनहितकारी, गुरु के आज्ञाकारी ।
अवगुण त्यागी गुण के ग्राही, दया भाव चित धारी ।।
निज चित शोधें मन परबोधें, जीव दोष नहीं दृष्टि ।
अपने भाव में बरतें निशदिन, करें दया की वृष्टि ।।
मोह माया मौर छल चतुराई, छोड़ें मूल विकारा ।
पर हित लागी सहज विरागी, ज्ञान बुद्धि भण्डारा ।।
दुःख क्लेश सह अपने सिर पर, जीव का करें सुधारा ।
भव दुःख भंजन काम निकंदन, यम से दें छुटकारा ।।
धर कपास की गति बिमल चित, निरस विशुद्ध कहावें ।
सहें विपति कठिनाई जग की, औरों का दोष छिपावें ।।
सरल स्वभाव रहें जग माहीं, अपना रूप सम्हारें ।
औरन के अवगुण नहिं देखें, दया का मर्म विचारें ।।

सुख देवें दःख हरें निरन्तर, क्षमा करें अपराधा।
हँसी खुशी आनन्द प्रेम गति, अगम अलेख अबाधा॥
नाम फकीर धराया तूने, हो फकीर अब साँचा।
जैसा नाम तो गुण भी वैसा, मन कर्म सहित सुबाचा॥
है फकीर का नाम पियारा, मैं फकीर का दासा।
तन मन धन फकीर पर वारूँ, बसूं सुसंग सुबासा॥
कठिन नाम है कठिन काम है, कठिन फकीर कमाई।
जग के भव दुःख नाशें पल में, जब फकीर जग आई॥
जो फकीर मोहे दर्शन देवे, अपना भाग सराहूँ।
अपने तन के चाम की जूती, पग फकीर पहनाऊँ॥
मैं नहीं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नहीं जानूं।
मैं फकीर का नाम दिवाना, सबसे बढ़कर मानूं॥
मेरे साधु हैं शब्द विवेकी, सन्त वंश कुल शोभा।
चरन कमल मस्तक पर धारूँ, प्रेम मगन मन छोभा॥
एक घड़ी साधु की संगत, कटे मोह यम फांसी।
मेरी नजर में साधु फकीरा, सत् चित् आनन्द रासी॥
जो फकीर का दर्शन पाऊँ, चरन सरोज पर वारूँ।
आप तरूँ उनकी शरनाई, औरों को संग तारूँ॥
साधु की संगत गुरु की सेवा, सहज ही काम बनावे।
जिस पर साधु की दृष्टि पड़ गई, फिर जग योनि न आवे॥
तरवर सरवर मेघ का पानी, औरों को सुखकारी।
तैसे ही सुन मेरे फकीरा, साधु पर उपकारी॥
त फकीर बन तू फकीर बन, तू फकीर बन भाई।
मैं भी तरूँ फकीर चरन लग, ऐ फकीर सुखदाई॥
सुन ले कथा सुनाऊँ तुझको, प्रगटे विमल विवेका।
जीव अनेक रहें जग अन्दर, पर फकीर कोई एका॥

———

सर्व-वेदान्त-सिद्धान्त-गोचरं तमगोचरम् ।
गोविन्दं परमानन्दं सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम् ।।
परम-तत्वस्या वतारं, परमपूज्यं सत्संगिनाम ।
मानवस्य परम् इष्टं, फकीरं वन्दे जगद्गुरुम् ।।

राधास्वामी !

मेरी अपनी ही आत्मा के अंश मूर्त्तरूप सद्गुरु, सत्संगी भाइयो और बहनो, इस महान् तीर्थस्थान-दधीचि ऋषि के आश्रम पर आज फिर मैं सत्संग देने के लिए आया हूँ। फकीर शब्द को सुनकर शायद किसी को यह गुमान या भ्रम हो जाये कि फकीर तो मुसलमानों के पीर मुर्शद का नाम है या जो कब्रों को पूजते हैं, ऐसे किसी फ़िरके की बात है, या फकीर का मतलब चीथड़े पहने हुए, हाथ में कटोरा लिए हुए भिक्षा मांगने वाले, किसी व्यक्ति को कहते हैं। ऐसी बात नहीं है। फकीर का मतलब है परमसन्त या सद्गुरु। चाहे वह किसी ज़माने में, या किसी समय में क्यों न अवतरित हुआ हो। भगवान् कृष्ण रेशमी कपड़े पहनते थे, शानदार महल में रहते थे लेकिन वह फकीर थे। हाँ, वह सच्चे फकीर थे। फकीर का मतलब यह नहीं कि आदमी अपने शरीर को तपा कर, दुःखी होकर रहे। फकीर का मतलब परमसन्त या सद्गुरु है। सद्गुरु कौन है ? गुरु और सद्गुरु में भेद है। गुरु-परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। जिसको आप हिन्दु धर्म कहते हैं, मैं उसे सनातन धर्म कहत हूं, जिसकी अनेक जातियाँ, अनेक फ़िरके अलग-अलग ह। गये, उस संस्था या समुदाय में दो चीज़ें कायम हैं, ज ऋषियों ने परम्परा से आदिकाल से बड़ी अच्छी, शुभ औ शिव दृष्टि से चलाई लेकिन आगे चल कर इस व्यवस्था जिसे वर्णव्यवस्था कहते हैं, का दुरुपयोग हुआ और समाज के मतभेद से वर्णव्यवस्था, बजाय लोगों को इकट्ठा करने

के, और सभी मनुष्यों को यह बताने के, कि शरीर से, मन से और बुद्धि से अलग होते हुए भी आत्मा से हम सब एक हैं, समाज को छिन्न-भिन्न कर दिया। समय के प्रभाव के कारण वर्णव्यवस्था एक जाति-विभाग हो गया; मानव समाज खण्ड-खण्ड होकर बँट गया, और चार वर्ण की जगह हज़ारों फ़िरके पर फ़िरके बनते चले गये। लेकिन अपने आप में वर्णव्यवस्था का एक उद्देश्य है। वह उद्देश्य क्या है? ऋषियों ने हज़ारों वर्षों की खोज के बाद यह निर्णय किया कि मनुष्य क्या है, और मानव का स्वरूप क्या है? वे इस नतीजे पर पहुँचे कि मानव इस जगत् में श्रेष्ठतम तत्त्व है। हालाँकि इस सच्चाई को वेदों और उपनिषदों में, अनुभव करने के बाद, बताया गया है कि सारे जगत् का सर्वाधार अव्यय परात्पर पुरुष है, जो इस जगत् में दृश्यमान नहीं है। वह अनघड़िया देवा है। लेकिन उस परात्पर परम पुरुष ने अपने विचार से सारे विश्व में कई दर्जे—भूः; भुवः, स्वः, महः जनः, तपः, सत्यम् कई आकाशगंगाएँ और कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड बना दिये और उसने खुद अपने अंशों-जीवों—को इस जगत् में इसलिए भेजा कि वे यहाँ आ कर इस बात का अनुभव करें कि यह सुन्दर जगत्, यह प्रकृति, जो राधा है, इसमें रहने से, अपने प्रियतम से बिछुड़ कर हम कैसा महसूस करते हैं? हम उसी की लीला को यहाँ देखते हैं। सारा जगत् उसने ही बनाया। किसी मक़सद से ही बनाया। परमतत्त्व का अंश-आत्माएँ इस लीला को देखने के लिए ही मनुष्य रूप में आईं; लेकिन यहाँ आ करके उन्होंने देखा कि एक तरफ तो है आधिदैविक जगत्, जिसमें पृथ्वी, चन्द्र, सूर्य, आकाशगंगा और स्वयम्भू हैं, इन सभी स्तरों पर मालिक के देवता अंश हैं। यह दैवी रूप है; ईश्वरत्व है। और दूसरी तरफ पंचतत्त्व हैं, जैसा

कि मेरे प्यारे मोहन ने कहा—पंचतत्त्व हैं जिन्हें आधिभौतिक कहते हैं, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश। यह भौतिक संस्थान है। और आधिदैविक संस्थान है जिसमें चन्द्रमा, सूर्य, परमेष्ठी आदि हैं। यह ईश्वरीय संस्था है और बीच में मानव संस्था है। वह धार जब नीचे उतरी, उसमें मानव ने आकर शरीर भी धारण किया और ईश्वरत्व की चेतना भी ले ली। यह मानव संस्था मध्य में है। यह अध्यात्म है। लोग समझते हैं कि अध्यात्म या रूहानियत का मतलब दुनिया को छोड़ देना है लेकिन इसका यह मतलब नहीं है। अध्यात्म का मतलब है परमतत्त्व का मनुष्यरूप धारण करना। यह मध्यमार्ग है। यही ऋषियों का मार्ग है; यही सन्तमत है। मैं यह बता रहा हूँ कि ऋषियों ने भी यही कहा कि मानव अपने आप में पूर्ण है; देवता पूर्ण नहीं हैं। दानव वे हैं जो केवल खाने-पीने और मौज उड़ाने में विश्वास रखते हैं और चार्वाक के भौतिक शरीरवादी सिद्धान्त के अनुयायी हैं। लेकिन मनुष्य केवल शरीर ही नहीं, बल्कि शरीर के साथ उसकी आत्मा भी है। उस परमतत्त्व के अंश-सुरत (विशुद्ध आत्मा) ने आकर शरीर, मन और आत्मा तीनों को अपनाया। मानव श्रेष्ठतम है। तुम मानव को निकृष्ट समझते हो। मानव को खराब कहते हो। किसी को भी खराब कहना मूर्खता है। मैं एक फकीर होने के नाते कह रहा हूं, मुझे तो कोई खराब आदमी दीखा ही नहीं आज तक। इस जगत् के अन्दर सब श्रेष्ठ हैं। एक बार नैमिषारण्य तपोवन में व्यास जी ने मुनियों की एक विशाल सभा में एक प्रश्न खड़ा किया कि एक तरफ तो वह परात्पर ब्रह्म-अव्यय है जो इस जगत् से परे है और दूसरी तरफ यह विस्तृत जगत् है जिसके अन्दर ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवता हैं, दानव हैं और मानव हैं। ऐसे जगत् के

अन्दर सर्वश्रेष्ठ वस्तु क्या है ? वृद्ध, नौजवान सभी ऋषियों ने चिन्तन किया। एक ऋषि ने उठ कर कहा, "महाराज ! मेरे विचार में सर्वाधार परमतत्त्व, जो सब से ऊपर है, अलख, अगम, अनामी से भी परे, दयाल देश में है, वही सर्वश्रेष्ठ है।" सब मौन रहे, जिसका अर्थ यह था कि व्यास की उस सभा ने यह उत्तर स्वीकार नहीं किया। ऋषियों ने कहा, "यह उत्तर ठीक नहीं है।" उसके बाद दूसरा ऋषि उठकर बोला, "परमतत्त्व सर्वाधार तो जगत् से परे है। प्रश्न जगत् के अन्दर की वस्तु का है। जगत् में सर्वश्रेष्ठ तत्त्व दैवी तत्त्व है, देवता हैं, आद्याशक्ति है, ब्रह्मा-विष्णु-शिव हैं, जो जगत् को चला रहे हैं।" पर इस उत्तर को भी सुनकर हज़ारों ऋषियों की वह सभा मौन रही। जिसका मतलब था कि यह उत्तर भी उचित नहीं था। आखिर में व्यास जी ने कहा :—

'गुह्यतरम् इदं ब्रवीमि, न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं किञ्चित्।'।

वेदों के ज्ञाता; उपनिषदों के निर्माता, पुराणों के निर्माता व्यास जी कहते हैं :—

'गुह्यतरम् इदम् ब्रवीमि, न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं किञ्चित्

मैं आप सबको एक बहुत गूढ़ रहस्य भेद की बात बता रहा हूँ। क्या ?

'न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्।'

मनुष्य से अधिक श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है। यह है मानव, जो देवताओं से भी ऊँचा है। मैं यह सब कुछ अहंकार से नहीं कह रहा। देवता तो अपनी ड्यूटी बजाते हैं। सूर्यदेव हैं, जो विष्णु का प्रतीक हैं। सूर्य नारायण काफी शक्तिशाली हैं। अगर पृथ्वी पर उतर आवें तो सभी जल जायें। लेकिन सूर्य मनुष्य से श्रेष्ठ नहीं है, क्योंकि सूर्य को अरबों वर्ष वहाँ बना रहना पड़ेगा और इस जगत् को पालन करने

की शक्ति देनी पड़ेगी। लेकिन मनुष्य इसी एक ही जन्म में, सद्गुरु के सम्पर्क में आकर और आध्यात्मिक अनुशासन का पालन करके, फकीर बन सकता है। फकीर वह है जो ईश्वर-परमेश्वर से भी परे है। मनुष्य परमतत्त्व की अवस्था तक जीते-जी ही पहुँच सकता है। यह वेदों का रहस्य मैं आप लोगों को आज महर्षि दधीचि के इस स्थान पर बता रहा हूँ कि मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ नहीं है :—

'सर्ववेदान्त-सिद्धान्त-गोचरं तमगोचरम्।'

वेद का मतलब है ज्ञान, और वेदान्त का अर्थ है अन्तिम ज्ञान। भौतिक ज्ञान नहीं, कम्प्यूटर, टेलीविज़न, हवाई जहाज़ का ज्ञान नहीं, प्रकृति का ज्ञान नहीं, ब्रह्माण्ड का ज्ञान नहीं, बल्कि इससे परे रहने वाला वह अविनाशी तत्त्व है, जो इस परिवर्तनशील जगत् के अन्दर अपरिवर्तनशील है, इस चल जगत् के अन्दर जो अचल है, अविनाशी है, वही तत्त्व जो तुम्हारे अन्दर भी है, उसका ज्ञान। उसी परमतत्त्व की अनुभूति कराने के लिए कहा है कि उसका जो ज्ञान है, वह वेदान्त है, वह ज्ञान की अन्तिम सीढ़ी है।

लाभ-हानि, जय-पराजय, निन्दा-स्तुति, दुःख-सुख तो हर समय उपस्थित रहते हैं। इनसे व्यक्ति कभी न कभी तंग आ ही जाता है। पहले तो वह समझता है कि सब ठीक है—अच्छे परिवार में पैदा हुआ हूँ, पैसा भी कमाने लगा हूँ, विवाह भी हो गया, सुन्दर पत्नी मिल गई है, बच्चे भी हो गये हैं, लेकिन ज्यों-ज्यों दिन गुज़रते हैं, कठिनाइयाँ सामने आती हैं। ठीक है, कठिनाइयाँ सामने आनी चाहिएँ; वे आत्मा की शुद्धि के लिए आती हैं। तब व्यक्ति घबराता है और अन्त में कहता है, महाराज! यह क्या अड़खंजा खड़ा कर दिया? मन को शान्ति नहीं। रामू नाम का एक व्यक्ति रोज़ एक गुरु के पास जाया करता था, और सत्संग

सुना करता था। गुरु उसे वेदों-उपनिषदों की बातें बताते। रामू बड़े आनन्द में था। लेकिन था वह ब्रह्मचारी, और ब्रह्मचर्य में संन्यास लेना मूर्खता की बात है। एक दिन गुरु जी ने रामू से कहा—"देख, तू बेशक सत्संग सुना कर, लेकिन अभी संन्यास की अवस्था में मत आ। तू नौजवान है, तुझे विवाह करना चाहिए। गृहस्थ का आनन्द भोगने के बाद फिर वानप्रस्थ में आना चाहिए। फिर सत्संग सुनना और संन्यास अवस्था में आना।" रामू बोला "नहीं महाराज! आपका सत्संग मुझे बहुत अच्छा लगता है; मैं आपका सत्संग नहीं छोड़ सकता।" गुरु जी ने कहा, "अच्छा भाई देख ले अभी तू संसार में है।" कुछ दिनों बीते, वह दो दिन सत्संग में आया नहीं। तीसरे दिन जब वह आया तो गुरु जी ने पूछा, "क्यों भाई! क्या बात हो गई, दो दिन नहीं आया?" रामू बोला, "महाराज! मेरे माता-पिता ने एक बड़ी सुन्दर लड़की से मेरी सगाई करा दी। मैं सगाई में गया था।" गुरु जी ने कहा, "मैंने तो तुझे पहले ही कहा कि अभी तू संन्यास न ले। अभी तो :—

'इब्तदा-ए-इश्क है रोता है क्या।
आगे-आगे देखिये होता है क्या॥'

मैं फिर कहता हूँ कि तू मेरे से मोह छोड़ दे। मैं तो साध-फकीर हूँ; मुझे न अच्छाई से मतलब, न बुराई से। मैं तो मालिक से मिला हुआ हूँ। तू खाहमखाह मेरी नकल क्यों करता है? 'काज़ी मरे कज़ा से, तू क्यों मरे रज़ा से?' तू अभी ऐश कर, व्यापार कर, तेरे व्यापार में बहुत कुछ है। तेरे भाई-बन्धु सब व्यापार करते हैं। तू भी जा व्यापार कर।" शिष्य बोला, "नहीं महाराज! ऐसी बात नहीं है। अभी तो मेरी मंगनी हुई है। जब तक शादी नहीं होती तब तक रोज़ आता रहूंगा और विवाह होने के बाद भी

रविवार को तो आ ही जाऊंगा।" गुरु जी बोले, "अच्छा भाई तू जान, तेरा काम जाने।" विवाह के बाद रामू पच्चीस-तीस दिन तक नहीं आया। भारत में विवाह भी तो विचित्र चीज़ है। सारे रिश्तेदार आते हैं और कई-कई दिन रहते हैं। विवाह के सम्बन्ध में एक ऋषि ने बहुत ही सुन्दर व्याख्या दी है :—

'कन्या वरयते रूपं, माता वित्तं पिता श्रुतम्।
बान्धवाः कुलमिच्छन्ति, मिष्ठान्नमितरे जनाः॥'

कन्या चाहती है कि उसका पति उसकी दृष्टि में सुन्दर हो, जैसे मजनू की दृष्टि में लैला सुन्दर थी, गो लैला काली थी मजनू एक आशिक-ए-सादिक था, सच्चा प्रेमी और सच्चा भक्त। उसे सब जगह लैला ही लैला दिखाई देती थी। एक बार उसके शहर में दो आदमियों में ज़मीन के लिए आपस में झगडा हुआ। एक कहता था कि ज़मीन इसकी है, दूसरा कहता कि उसकी है। उन्होंने आपस में तय किया कि वकील तो पैसा खायेंगे, मजनू सच्चा है; उसी को हम सालस बना दें। जब दोनों ने अपने-अपने कागज़ात लेकर मजनू के सामने पेश किये, तो मजनू बोला, "भाई ज़मीन न तेरी है, न उसकी; ज़मीन तो लैला की है।" 'सबै भूमि गोपाल की।':—

'किसी ने कहा मजनू से कि लैला तेरी काली है।
मजनू ने कहा, ऐ भोले लोगो, तेरी आँख न देखन वाली है॥

देखने वाली आँख तो एक भक्त के पास होती है; चश्मे-वहदत होती है उसकी। उसे कहीं भी बुराई दिखाई नहीं देती।

तो कन्या चाहती है कि उसका पति उसकी दृष्टि में रूपवान् हो। ज़रूरी नहीं कि रंग सफेद हो। सुन्दरता तो मन में होती है। माता चाहती है कि मेरा दामाद बरसरे

रोज़गार हो, पैसा अच्छा हो। आज दुनिया बदल गई। पहले तो कहते थे कि दामाद पैसे वाला हो, पर अब कहते हैं कि लड़की मालदार होनी चाहिए, दहेज ज्यादा आना चाहिए। यह तो शादी न हुई, सौदेबाजी होने लगी। इस हालत में पति-पत्नी एक-दूसरे से प्यार कैसे कर सकते हैं? माता चाहती है कि उसका दामाद सम्पन्न हो। पिता चाहता है कि उसकी पुत्री का वर पढ़ा-लिखा हो, श्रुतवान् हो। बन्धु अच्छा कुल-खानदान चाहते हैं। वे कहते हैं कि लड़की की सगाई हो तो यह देखना चाहिए कि वर का खानदान कैसा है? रिश्तेदार कभी-कभी गड़बड़-घोटाला करते हैं। मँगनी ही तुड़वा देते हैं। ईर्ष्या से कहते हैं—केवल जाति वाले यहाँ बैठ सकते हैं, बाहर वाले नहीं। किसी ने ठीक ही कहा है, "जातिश्चेत् अग्निना किम्!" अगर तुम्हारी जाति के लोग उपस्थित हैं तो अग्नि की जरूरत ही नहीं; वे ही जलते रहेंगे देख-देखकर। बाकी के जो हजारों लोग इकट्ठे हो जाते हैं, वे कहते हैं—"मिष्ठान्नमितरे जनाः" "चलो भाई मिठाई तो खूब मिलेगी और खाना भी अच्छा मिलेगा ही।"

तो राम की शादी के बीस-पच्चीस दिन गुज़र गये। उसके बाद वह एक दिन गुरु जी के यहाँ गया और बोला, "गुरु जी, मेरा विवाह हो गया। पत्नी बहुत अच्छी है; मेरी जन्म-जन्म की संगिनी है। गृहस्थ जीवन के साथ-२ अब आपका सत्संग भी सुनता रहूंगा। बच्चों पर अच्छा संस्कार पड़ेगा।" गुरु जी बोले, "अब तुझे फुर्सत नहीं मिलनी :--

"सुमिरन कर सिया-राम नाम, दिन नीके बीते जाते हैं।
बाल अवस्था खेल गँवायो, युवक भयो युवती सँग लाग्यो।
वृद्ध भये कछु बन नहिं आवे, फिर पाछे पछताते हैं॥

सुमिरन०

कौन तुम्हारा कुटुम्ब-कबीला, ये सब हैं मतलब का होला।
जीते जी के नाते हैं ।।सुमिरन०।।
लख चौरासी भुगत के आया, बड़े भाग्य मानुष तन पाया।
ता पर भी न करी कमाई, युग-युग बीते जाते हैं ।। सुमिरन०

राम् के गुरु जी बोले, ',अभी तो तुमने बाल अवस्था खेल में गँवाई है, अब युवती के साथ बिताओ। ख़्वाहमख़्वाह इस चक्कर में क्यों आते हो ?" राम् बोला, ' नहीं महाराज! ऐसा भी क्या है !" गुरु जी बोले, "अच्छा भाई, तेरी मर्ज़ी।" सद्गुरु तो अच्छी बात पहले ही कह देते हैं। अगर कोई नहीं मानता तो उसकी मर्ज़ी। फिर उसको कष्टों का सामना करना पड़ता है।

कुछ दिनों तक तो राम् हफ्ते में एक दिन सत्संग में जाता रहा। परन्तु बाद में आठ साल तक गुरु के दर्शन करने तक भी नहीं गया। बच्चे हो गये। मैं स्त्री को बच्चे पैदा करने की मशीन नहीं मानता। स्त्री में भी आत्मा होती है, उसमें भी परमतत्त्व है। जब अधिक बच्चे हो गये तो कभी बीमारी, कभी कष्ट, कभी चिन्ताओं से राम् दुःखी हो गया। तो पूरे आठ साल बाद वह गुरु जी के पास गया। बोला, "गुरुदेव, आप ठीक कहते थे। मैंने ग़लती की जो गृहस्थ में फँस गया। अब मुझे वे दिन याद आते हैं जब आपका सत्संग रोज़ आनन्द से सुना करता था। अब तो ऐसा फँसा कि फ़ुर्सत ही नहीं मिलती आपके पास आने की। बहुत दुःखी हो गया हूँ। कृपा करके मुझे इस दुःख से छुटकारा दिलाइये।"

गुरु जी ने उसे एक जड़ी-बूटी दी और कहा, "इसे खा लेना और घर जा कर चुपचाप ऐसे सो जाना मानो मर गये। पर तुम मरोगे नहीं। फिर मैं आकर तुम्हें इस झंझट से छुड़ा लूंगा जिसमें तम फँस गये हो।"

राम् ने घर आकर वैसा ही किया और जड़ी-बूटी खाते ही बेहोश पड़ गया। उसका शरीर अकड़ गया मगर चेतनता थी। उसकी पत्नी आकर जगाने लगी, पर उसने आँख नहीं खोली। उसने घबरा कर ससुर को बुलाया। ससुर ने उसे ज़ोर-ज़ोर से बुलाया, हिलाया-डुलाया, पर राम् न उठा। अन्त में घबरा कर डाक्टर बुलाया गया। डाक्टर ने आकर उसकी नब्ज़ देखी तो बन्द। उसने कहा, यह तो मर गया, अब डाक्टर क्या कर सकता है? शव की तैयारी करो।" यह सुनकर सब ज़ार-ज़ार रोने लगे। पिता रोकर बोला, "घोर कलियुग है। मेरे रहते जवान पुत्र मर गया। मैं ही मर जाता तो अच्छा होता।" पत्नी बिलख कर बोली, "स्वामी आपकी जगह मैं मर जाती तो अच्छा था।" सभी विलाप करने लगे। अर्थी की तैयारियाँ होने लगीं; पुरोहित को बुलाया गया, सब सामग्री बाज़ार से आ गई। इसी बीच गुरु जी आ गये और पूछा, "मेरा राम् कहाँ है? यह सब क्या हो रहा है?" सम्बन्धी बोले, "महाराज! आपका राम् तो मर गया; उसके शव की तैयारी हो रही है।" गुरु जी बोले, "ठहरो, अगर मैं राम् को ज़िन्दा कर दूँ तो!" पिता बोला, "धन्य महाराज! आप सच्चे गुरु हो। राम् भी आपकी बड़ी तारीफ करता था। आप सद्गुरु हो।" गुरु जी बोले, "मैं इसे ज़िन्दा तो कर दूंगा, पर शर्त है कि इसके बदले किसी को मरना पड़ेगा। सामान तो सब तैयार है, इसका इस्तेमाल तो करना ही है। आप में से कोई भी इसकी जगह मरने को तैयार हो जाओ, तो मैं इसे अभी ज़िन्दा कर दूं।" पिता कहने लगा, "महाराज! अभी तो मेरे और पुत्र हैं, उनकी शादी करनी है। भला मैं कैसे मर सकता हूँ?" पत्नी ने कहा, "मेरे छोटे-छोटे बच्चों की परवरिश कौन करेगा?" दादी 80-85 वर्ष की थी। जब

उसे मरने को कहा गया तो वह बोली, "मैं तो प्रात: गंगा-स्नान, पूजन, ध्यान करती हूँ। मैं अभी क्यों मरूँ ? मैं नहीं मरती।" अब एक सबसे बूढ़ी परदादी 115 साल की थी, न कानों से सुनाई देता, न आँखों से दिखाई देता था, न वह उठ-बैठ सकती थी। चारपाई पर पड़ी रहती थी। लोगों ने उसके पास जाकर कानों में जोर-जोर से चिल्लाकर कहा, "दादी माँ ! दादी माँ ! रामू मर गया।" वह बोली, "रामू घर गया ? किसके घर ?" बोले; "परदादी माँ, घर नहीं, मर गया।" बुढ़िया बोली, "बड़े अफसोस की बात है, मर गया।" बोले, "परदादी माँ, वह जिन्दा हो सकता है। गुरु जी कहते हैं, अगर उसके बदले कोई मरने को तैयार हो तो वो उसे जिन्दा कर देंगे। तुम तो बहुत बूढ़ी हो परदादी माँ ! उसकी जगह मर जाओ तो वह जिन्दा हो जायेगा। बोली, मैं क्यों मरूँ ? मैं नहीं मरती। कोई किसी के लिए नहीं मरता। सब ने इन्कार कर दिया।

रामू पड़ा-पड़ा यह सब सुन रहा था। तब गुरु जी ने उसके कान खींचे और बोले, "चल भई, तेरे साथ तो कोई जाने को तैयार नहीं है। मैं तुझे अपने साथ ले चलता हूँ।" गुरु जी ने उसे संन्यास दिया। कहने का मतलब यह कि कोई व्यक्ति मरना नहीं चाहता। क्यों नहीं मरना चाहता ? आप देखते हैं, लोग श्मशान में जाते हैं ; शव जल रहा होता है, सब अन्दर से डरते हैं। देखते हैं कि शव जल रहा है पर कोई नहीं सोचता कि वह भी किसी दिन मरेगा। आप कहोगे कि यह बुरी बात है, मैं कहूँगा यह बड़ी अच्छी बात है क्योंकि दरअसल मृत्यु है ही नहीं। हमारे अन्दर का अविनाशी तत्त्व कह रहा है कि मृत्यु है ही नहीं। जितने सिद्धान्त वेदान्त के हैं, वे बताते हैं कि तुम अविनाशी तत्त्व हो। अविनाशी होकर कैसे मरोगे ? राधास्वामी कहने से

तुम डरते हो। राधा ही प्रकृति है और स्वामी पुरुष है जिससे निकल कर हम सब मानव के रूप में आये। मनुष्य के अन्दर राधा भी है और स्वामी भी है इसलिए वह प्रतिष्ठित है। इसीलिए जब सन्त अवतार मनुष्य रूप में आता है तभी वह पूर्ण सद्गुरु अवतार होता है। ऊपर बैठा हुआ दयाल इसलिए कारगर नहीं होता कि वह नर शरीर में नहीं है। वह जब नर शरीर में, और गोबिन्द बनकर आता है तभी वह जीवों को उबारता है :—

'गोविन्दं परमानन्दं सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम्।'

जो गोविन्द मानव रूप में सद्गुरु होकर हमें चेताने आया है, उसको नमस्कार है। वह शरीर में व्यवहार करता हुआ भी जानता है कि शरीर कुछ नहीं है। मन का प्रयोग करते हुए भी, कामनाओं को पूरा करते हुए भी, वह जानता है कि यह केवल खेल है। एक ज्ञानी और अज्ञानी के व्यवहार में अन्तर होता है। अज्ञानी फँस जाता है, ज्ञानी फँसता नहीं। शरीर, मन और बुद्धि से कर्म करते हुए भी उसकी आत्मा शुद्ध होती चली जाती है। सद्गुरु का मतलब फकीर है ; फकीर सद्गुरु है। वह परमतत्त्व का अवतार है जो युग-युग में मनुष्य के चोले में आता रहा है, आ रहा है, और आता चला जायेगा :—

'नाना भाँति राम अवतारा, रामायण शत कोटि अपारा।'

अवतार एक-दो नहीं होते। आपको एक नई बात बताऊँ। इस पृथ्वी पर हर युग में, हर समय छप्पन (56) गुरु उपस्थित होते हैं जिनको ज्ञान होता है और जो दूसरों को रास्ता दिखाते हैं। उन छप्पन में से आठ (8) सद्गुरु होते हैं, और यह जरूरी नहीं कि सभी सद्गुरु आश्रम ही चलायें, या साक्षात् सत्संग दें। वे कोई भी काम कर सकते हैं। सद्गुरु प्रोफेसर भी हो सकता है, समाजसेवी भी हो

सकता है। मदन मोहन मालवीय सद्गुरु थे। सद्गुरु वैज्ञानिक भी हो सकता है। सर सी. वी. रमन सद्गुरु थे। उन्होंने दधीचि की तरह अपनी संस्था को चलाकर; परम-तत्त्व की ओर जाकर कुर्बानी का रास्ता दिखाया, ज़रूरी नहीं कि सद्गुरु मंच पर बैठकर सत्संग दे। अरे वह एक ऐक्टर भी हो सकता है पृथ्वीराज की तरह। मैं आपको ठीक बता रहा हूँ। लेकिन उन आठ सद्गुरुओं में से केवल एक ऐसा होता है जो सन्त सद्गुरु वक्त होता है। पर हैं सभी अवतार। एक समय में एक से अधिक अवतार हो सकते हैं। राम के समय में परशुराम थे। पहले परशुराम हुए, राम बाद में हुए। परशुराम ने राम को पहचाना। रामायण में बड़ा सुन्दर वृत्तान्त है, भगवान् राम का शिव-धनुष तोड़ना तो एक बहाना था। परशुराम ब्रह्मचर्य के अवतार थे; वह क्रोधी थे। उन्हें अपने से बड़े अवतार के सामने नतमस्तक होना था। सीता-स्वयंवर हो चुका था, धनुष टूट चुका था, भगवान् राम ने उसके खण्ड-खण्ड नीचे फेंके; जयमाला पहिनाई जा चुकी थी; जै-जैकार हुआ; देवताओं ने पुष्प बरसाये। सब ओर आनन्द-मंगल हो रहा था। परशुराम आये तो हा-हा-कार मच गया। सब थरथर काँपने लगे थे। कहते हैं परशुराम क्षत्रियों का नाश करते थे। यह ग़लत है। क्षत्रियों का नहीं, वे रजोगुण और क्रोध का नाश करने आये थे। इसी लिए क्रोधी क्षत्रिय बने हुए थे। परशुराम ने आकर पूछा—"किसने तोड़ा मेरे इष्ट के धनुष को?' लक्ष्मण भी क्षत्रिय थे साक्षात् रजोगुण, उनको क्रोध आ गया। बोले—"पुराना-सा धनुष टूट गया तो क्या हो गया?" परशुराम ने गर्ज कर कहा, "कौन है तू? अभी परसे से तुझे समाप्त करता हूं।" राम ने कहा, "महाराज यह बालक है; आप तपस्वी हो, इसे क्षमा करो।" लक्ष्मण

बोले, "खाक तपस्वी हो ! तुम तो क्रोध करते हो ?" जब परशुराम को बहुत क्रोध आया तब राम ने कहा, "महाराज यह बालक नहीं जानता कि आप कितने बड़े हो। इसे क्षमा करो :—

'राम मात्र लघु नाम हमारा।
परशुराम बड़ नाम तुम्हारा ॥'

राम ने उन्हें नमस्कार करके कहा, "महाराज यह अपराध तो मुझसे हुआ है।" परशुराम को अनुभव हुआ कि यह तो अवतार ही हो सकते हैं। फिर बोले, "तुम्हें मैं तब मानूंगा जब मेरा धनुष चढ़ा कर दिखा दो।" राम के छूते ही धनुष अपने आप चढ़ गया। उन्होंने बता दिया कि हमें प्रेममय होना है। परशुराम को पता चल गया।

ऐसे ही परमतत्त्व के अवतार पं० फकीर चन्द जी महाराज थे। दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज ने उन्हें पहचान लिया, जो पहले गौतम बुद्ध के अवतार थे, यानि कि विष्णु के अवतार थे। मैं सनातनधर्मियों को बता रहा हूँ। सनातन धर्म के बारे में कोई मुझसे बात करे। वेदों-उपनिषदों के बारे में मैंने बहुत खोज की है, किताबें लिखी हैं। सब कुछ करने के बाद जब मैं परम दयाल जी के सम्पर्क में आया तो अचानक विस्फोट हुआ मेरे अन्दर मेरा अविनाशी तत्त्व प्रकट हो गया। मुझे पता चल गया कि मैं क्यों आया हूँ। गुरु बहुत होते हैं सद्गुरु भी कई हो सकते हैं पर फकीर जो सन्त सद्गुरु वक्त होता है, वह कोई एक होता है। वह मानवमात्र के कल्याण के लिए मनुष्य के चोले में आता है। और करनी तो वह एक नमूना पेश करने के लिए करता है। लेकिन उसकी करनी से लाखों लोग उसके महान् रूप को पहचान जाते हैं, मगर पहचानते वे हैं जिनकी आँखें पहचानने वाली हों मजनू की तरह; जो उसके

प्रेम को पहचानते हैं और उससे प्रेम करते हैं और उस फकीर सन्त सद्गुरु वक्त की जात पाक से वे तर जाते हैं :--

'गुरु की सेवा साध की संगत, सहज ही काम बनावे।'

फकीर के लक्षण तो उन्होंने बताये लेकिन ये लक्षण हर अवतार में होते हैं। तुम्हारे अन्दर भी वे लक्षण हैं। अगर तुम फकीर सन्त सद्गुरु के साथ रहोगे तो तुम भी फकीर बन जाओगे। सन्तमत सनातन धर्म की ही आखिरी कड़ी है :—

'राधास्वामी नाम, जो गावे सोई तरे।
कलह कलेश सब नाश, सुख पावे सब दुःख हरे॥'

राधास्वामी नाम, राधास्वामी अवस्था, राधा का प्रेम स्वामी से इतना हो कि राधा, राधा न रहे, स्वामी, स्वामी न रहे, आत्मा, आत्मा न रहे, परमात्मा, परमात्मा न रहे। एक ही भाव के हो जायें। यह है राधास्वामी अवस्था। क्या राधा का प्यार आपके अन्दर है? राधा प्रेम के सिवा और कुछ नहीं करती थी। कोई नियम नहीं, कुछ नहीं। मालिक के सच्चे प्रेम में कोई मर्यादा नहीं। सारी मर्यादाएँ तोड़ देना ही मर्यादा है प्रेम की। भगवान् कृष्ण की आठ रानियाँ उनकी आठ कलाएँ थीं। उन्हीं में मस्त द्वारिका में ऐशो-आराम कर रहे थे लेकिन मन राधा में लगा हुआ था। उधर राधा अपनी सहेलियों के बीच वृन्दावन में तड़प रही थी। कृष्ण अपने महल में तड़प रहे थे। महल उन्हें अच्छा नहीं लगता। उनके मन में तो राधा बस रही थी। रुक्मिणी ने व्यंजन-पकवान के थाल परसे। भगवान् खाने बैठे तो 'राधा-राधा' नाम याद करने लगे। रुक्मिणी ने पूछा, "महाराज! आपकी सेवा में तो दिन-रात हम लगी रहती हैं, व्यंजन-पकवान पकाती हैं, और आप हमेशा "राधा-राधा" जपते हैं। रुक्मिणी, सत्यभामा आदि को भूलकर भी नहीं याद

करते। राधा में ऐसी क्या बात है ?" भगवान् बोले, इसका भेद और कोई नहीं जानता ; इसको मैं जानता हूँ। रुक्मिणी जो बोलीं, "महाराज; हमें भी तो बताओ! वो बोले, "अच्छा, किसी दिन आपको भी अनुभव हो जायेगा।"

कुछ दिनों बाद लीला पुरुषोत्तम ने लीला रचाई और बीमार पड़ गये। कराहने लगे—"मुझे पेट का दर्द है ; सिर में भीषण पीड़ा हो रही है ; बुखार बहुत तेज़ चढ़ गया है।" रुक्मिणी, सत्यभामा आदि सभी रानियाँ इकट्ठी हो गईं। पूछने लगीं, "महाराज आपकी बीमारी की क्या दवा है ? सिर की मालिश की जाये ? या वैद्य को बुलाया जाये ? क्या सेवा की जाये ? आपको कैसे आराम होगा महाराज। दुनिया में जो भी उपचार आपके कष्ट के लिए हैं, बताइये हम करने को तैयार हैं!" भगवान् बोले; "इलाज तो साधारण-सा है। सहज मार्ग है, किञ्चित् कठिनाई नहीं। अगर कोई मेरा सच्चा प्रेमी हो जो मुझसे सच्चा प्यार करता हो, उसके पाँव की धूलि मेरे मस्तक पर मल दी जाये, तो हम ठीक हो जायेंगे। सब रानियाँ एक स्वर से बोलीं, "महाराज, भला यह कैसे हो सकता है ? हम आपकी पत्नियाँ हैं, सेविकाएँ हैं। हमारा धर्म आपके चरणों में रहना है। हमारे पाँव की धूलि आपके मस्तक पर कैसे लगे ? यह हम से नहीं हो सकता। कोई और इलाज हो तो बताइये!" भगवान् बोले, "भाई इलाज तो बस यही है। अब करो, न करो, तुम्हारी मर्ज़ी। हमारा कर्मभोग है, हमें भोगने दो।" सब रानियाँ चुपचाप चली गईं। थोड़ी देर बाद देवर्षि नारद ने मन में विचार किया कि नारायण और विष्णु आदि कुछ नहीं ; हमें सद्गुरु रूप में प्रगटे भगवान् श्रीकृष्ण का दर्शन करना चाहिए। इस विचार से वे द्वारिका पहुँचे और राजमहल के द्वारपालों से पूछा कि

भगवान् कहाँ हैं ? वे बोले, भगवान् तो महल में बीमार पड़े हैं। नारद बोले, "परमतत्त्व के अवतार बीमार हैं ?" द्वार खुले हुए थे ; नारद अन्दर पहुँच गये। भगवान् ने देखकर कहा, "नारद तुम आ गये, अच्छा किया। हम बहुत कष्ट में हैं।" नारद जी ने पूछा, "महाराज ! आपके कष्ट का निवारण क्या है ? औषधि बताइये ! मैं आपका भक्त हूँ। हुक्म कीजिये, जो भी आपके कष्ट का इलाज हो। हनुमान तो पर्वत उठाकर लाया था, मैं ब्रह्माण्ड को लाकर आपके सामने रख दूंगा।" भगवान् बोले, "भाई नारद ! मेरा तो बिलकुल सरल इलाज है, अगर कोई मुझे प्यार करने वाला सच्चा भक्त हो, तो उसके पाँव की थोड़ी सी धूलि लाकर हमारे मस्तक पर मल दी जाये तो हम बिलकुल ठीक हो जायेंगे। नारद बोले, "राम-राम घोर पाप ! महा अन्याय ! मेरे समान आपका कोई भक्त नहीं है। मैं रात-दिन आपका नाम जपता रहता हूँ। मैं दिल से चाहता हूँ कि आप ठीक हो जायें। लेकिन मेरे पाँव की धूलि आपके मस्तक पर। यह कभी नहीं हो सकता। कोई और उपचार बताइये ! भगवान् बोले, "नारद, इलाज तो बस यही है। रानियाँ भी नहीं कर सकीं और तुम भी नहीं कर सकते। चलो, रहने दो, मेरा कर्मकष्ट है, मुझे भुगतने दो।" नारद बड़े दुःखी हुए। वहाँ से घूमते-फिरते वृन्दावन पहुँचे। सखियाँ चिन्ता-मग्न बैठी हुई हैं और राधा अधीर दिन-रात चिन्ता में डूबी रहती हैं—हमारा प्रियतम कृष्ण कैसा होगा ? कौन उन्हें भोजन खिलाता होगा ? इसी बीच दूर से "कृष्ण-कृष्ण" की आवाज सुनाई पड़ी। देखा तो नारद चले आ रहे थे। बोले—"मैं तुम्हारे प्रियतम से मिलकर आ रहा हूँ।" गोपियाँ बोलीं, "अच्छा, आप द्वारिका से आ रहे हैं ? हमारे प्रियतम का क्या समाचार है ? कैसे हैं वह ? क्या

कोई सन्देश भी भेजा है ?" नारद बोले, "बड़ी दुःखद सूचना है ?" राधा अधीर होकर बोली "क्या दुःखद सूचना है ?" नारद ने सारा हाल सुना दिया, "वह सख्त बीमार हैं। पीड़ा में पड़े कराह रहे हैं।" राधा बोली, "उनके कष्ट का कोई न कोई इलाज तो होगा ही ! जल्दी बताओ हमें, हम करेंगे।" नारद बोले, "इलाज तो उन्होंने स्वयं बताया है लेकिन वह इलाज ऐसा है जो हो ही नहीं सकता। देवर्षि होते हुए मैं भी नहीं कर सकता। भला तुम कैसे करोगी ?" राधा बोली, "आप श्रेष्ठ हो। हम भले ही नीच और अधम हैं लेकिन हमें कृपा करके इलाज तो बता दो ! एक चूहा भी शेर को जाल से छुड़ा सकता है। हमें बताओ तो सही।" नारद बोले, "भगवान् ने कहा है कि अगर कोई उनका सच्चा प्रेमी भक्त हो और उसके पाँव की थोड़ी सी धूलि उनके मस्तक पर मल दी जाये, तो वे ठीक हो जायेंगे।" राधा बोली, "बस, इतनी सी बात ! इतना सरल इलाज !" और राधा के साथ ही सब गोपियाँ बोल उठीं—"यह लो हमारे चरणों की सारी धूलि ले जा कर हमारे प्रियतम के सारे देह पर लगा दो।" नारद बोले, मूर्खों ! तुम नहीं समझतीं। तुम सीधे नरक में चली जाओगी।" गोपियाँ बोलीं, "हाँ-हाँ, जाने दो हमें नरक में। हम खुशी से नरक चली जायेंगी, लेकिन हमारे प्रियतम को अभी ठीक होना चाहिए।"

राधा धूलि का पात्र लिए द्वारिका पहुँचीं। वहाँ सब रानियाँ उदास बैठी थीं। भगवान् राधा को देखते ही बोल उठे, "आ गई, राधा आ गई ! देखो राधा, हम कितने कष्ट में हैं !" राधा बोली, "आपने अपना इलाज तो बताया था न ! देखिये यह हमारे पाँवों की धूलिभरा पात्र है।" और धूलि को लेकर भगवान् के सारे शरीर और मस्तक पर मल दिया। भगवान् बोले, "बस-बस, मैं बिलकुल ठीक हो गया।

थोड़ी सी धूलि ही काफी थी। देखो रुक्मिणी ! देखो सत्य-भामा ! यह है सच्चा प्यार। प्रेम में कोई नियम नहीं होता। प्रेम अपना नियम आप ही है।"

बात यह है कि कृष्ण सत्पुरुष थे, सच्चे फकीर थे। एक समय में आठ सद्गुरु होते हैं। सन्त सद्गुरु वक्त केवल एक होता है। और वही सन्त सद्गुरु वक्त को पहचानता है। दाता दयाल जी ने परम दयाल जी को पहचाना और बताया कि फकीर के क्या लक्षण होते हैं। उन लक्षणों को अपनाना ही सद्गुरु का काम है।

'तू फकीर है मेरे प्यारे, प्यारे सुन फकीर की बानी।
साधू कहें फकीर को भाई, साधु जग सुख दानी ।।'

जो सद्गुरु वक्त होता है उसको ही फकीर कहते हैं और फकीर को ही साधु कहते हैं। साधु जग को सुख देने के लिए आता है। उसके शरीर की आहुति, हर प्रकार से जगत् के कल्याण के लिए होती है। मैंने आपको बताया कि सी० वी० रमन ने एक संस्था खोली जिसमें उन्होंने अनुसन्धान किया कि अणु क्या है ? उन्होंने कहा कि यह संस्था इसलिए है कि वैज्ञानिक अपना बलिदान देकर एक नई चीज़ पैदा करें, जैसे कि दधीचि ने अपने शरीर की बलि देकर वज्र का अस्त्र बनाया।" बात क्या है ? दधीचि ने वज्र-अस्त्र के लिए अपनी हड्डियां दीं, उसके अन्दर आणविक शक्ति थी। और सी० वी० रमन ने अपने समय की आहुति देकर एक ऐसी किरण की खोज की जिसके आधार पर अणु बम बना। मैं तो समझता हूँ कि दधीचि ही सी० वी० रमन बनकर आये और वे सद्गुरु थे। जब मैं पांच साल की आयु का था मुल्तान में पं० मदन मोहन मालवीय आये थे, तो मेरे पिता जी मुझे वहां ले गये, जहां वह ठहरे थे। मेरे पिता जी किसी काम से बाहर गये, तो

पं० मालवीय जी ने मुझे कहा—"बेटे क्या तुम गायत्री मन्त्र का जाप कर सकते हो ?" मैंने गायत्री का जाप किया। मुझे याद नहीं कि मैंने यह मन्त्र कब और कैसे सीखा। मालवीय जी ने प्रसन्न होकर मेरे माथे पर अपना हाथ रखा और मुझे पाँच रुपये का चमकता हुआ नोट दिया। इस तरह पं० मदन मोहन मालवीय जी ने मुझे पाँच साल की आयु में दीक्षा दी। इस तरह अपनी मस्ती में रहता हुआ जीवन्मुक्त अवस्था में रहता हुआ, जब मैं परम दयाल जी के सम्पर्क में आया तो मेरे अन्दर के अविनाशी तत्त्व का जो मेरा अनुभव था, वह ऊपर को पनप उठा। मैं उनको सद्गुरु वक्त परमतत्त्व का अवतार मानता था, रात-दिन उन्हीं के ख्याल में डूबा हुआ रहता था।

अमरीका में एक संस्था है A.R.E. (Association for Research and Enlightenment) जिसे वहाँ के एक ऋषि ने चलाया था, जो त्रिकालदर्शी था। उसका नाम था एडगर कैसी (Edgar Cayce)। उस संस्था में सभी सदस्य अमरीकी तथा पश्चिमी देशों के हैं लेकिन वे पुनर्जन्म, योग और समाधि को मानते हैं। उन्हें मेरा पता चला और वे मेरे सम्पर्क में आये। परम दयाल जी महाराज की आज्ञा से मैंने उन्हें सत्संग देना शुरू किया। जब वे भारत में भ्रमण करने आये, यहाँ के योगियों, सिद्धों से मिले और बहुत से बड़े-बड़े योगी-सिद्धों को देखा। मैंने अमरीका से परम दयाल जी को चिट्ठी लिखी थी कि वे अमरीकी उनसे मिलने दिल्ली आ रहे हैं। परम दयाल जी महाराज उस समय दिल्ली में ही थे। और जब वे अमरीकी उनसे मिले तो महाराज ने उन्हें सत्संग दिये। उस संस्था का मुखिया, ह्यलिन कैसी ने कहा, "अगर सारे जगत् में कोई सच्चा सन्त और फकीर इस समय है, तो वह परम दयाल जी

महाराज हैं।" जब वे अप्रैल 1969 में अमरीका वापिस आये तो न्यूयार्क में उन्होंने एक बड़ी भारी संस्था के हाल के अन्दर सत्संग आयोजित किया जिसमें उन्होंने मुझे भी आमन्त्रित किया। जब उन्होंने परम दयाल जी के सम्बन्ध में सारी बातें कहीं, और मैंने भी उन्हें सत्संग दिया, एक घण्टे के सत्संग में वे सब मस्त हो गये। जब सत्संग समाप्त हुआ तो दो बूढ़ी महिलाएँ मेरे पास आईं। एक ने कहा, "मुझे नामदान दीजिये।" दूसरी ने कहा, "मैं नामदान तो नहीं चाहती अभी, एक बात आपको बताना चाहती हूँ। मेरे पति मिस्टर हास तीस साल पहिले मर गये। उन्होंने बहुत काम किया और विश्व-धर्म की एक पत्रिका भी निकलवाई, और कई वर्षों तक भारत के विद्वानों और धार्मिक लोगों से पत्र-व्यवहार भी किया, मैं वह सारा पत्र-व्यवहार आपको भेज देना चाहती हूँ।" और जब उसने मुझे वे पत्र भेजे, तो मैंने देखा कि उसने महात्मा गांधी को भी पत्र लिखे थे; एक प्रोफेसर दस्तूर थे इलाहाबाद विश्व-विद्यालय के, उनको उसने एक चिट्ठी लिखी थी और कहा था "मैं सद्गुरुओं की एक सूची बना रहा हूँ, आप कृपया मुझे बतायें कि इस समय भारत में जीवित सद्गुरु कौन-२ हैं?" जब उस चिट्ठी का जवाब मैंने पढ़ा, उसमें लिखा था, "लोग नहीं जानते, इस समय ये सद्गुरु हैं—पं० मदन मोहन मालवीय, श्री सी. वी. रमन और डा. राधाकृष्णन्।" यह पढ़ते ही मेरी आँखें खुल गईं, और मुझे मेरे बचपन की वह घटना याद आ गई कि सद्गुरु पं० मदन मोहन मालवीय ने ही मुझे दीक्षा दी थी, और सद्गुरु डा. राधाकृष्णन् ही मेरे विद्यागुरु बने, और परमसन्त सद्गुरु वक्त परम दयाल जी महाराज मेरे वास्तविक सद्गुरु बने। इसलिए मैं अपने अनुभव के आधार पर बता रहा हूँ कि सद्गुरु, जिसके अन्दर

ये लक्षण हैं, वह दूसरे सद्गुरु को पहचानता है। दाता दयाल जी खुद कहते हैं :—

'तू फकीर है मेरे प्यारे, सुन फकीर की बानी।
साधु कहें फकीर को भाई, साधु जग सुखदानी ॥
परउपकारी जनहितकारी, गुरु के आज्ञाकारी ।
अवगुण त्यागी गुण के ग्राही, दया भाव चित धारी ॥'

ये लक्षण हैं फकीर के, परमसन्त के, जो सद्गुरु वक्त हो सकता है वह परउपकारी, जनहितकारी होता है। उसका उपकार हमेशा परउपकार होता है। आप कहते हैं, हमें यह कष्ट है, वह कष्ट है। ये सब कष्ट तो आपके विश्वास से दूर हो जाते हैं। लेकिन सद्गुरु आपको परम-तत्त्व तक पहुँचाने का परम उपकार करते हैं। उपकार और परउपकार में फ़र्क है। उपकार तो यह है कि आपको पैसे की ज़रूरत है, मैंने आपको पैसे दे दिये। आपको नौकरी की ज़रूरत है, नौकरी दे दी। परन्तु परउपकार है, परमतत्त्व को मिला देना। लेकिन कोई पहचानता नहीं उसको। सद्गुरु जो चीज़ देना चाहता है, उसको लेने वाला कोई नहीं है। सद्गुरु क्या होता है ? वह परम दयाल होता है। सद्गुरु जो देना चाहता है, अगर उसे आप ले लोगे तो आप खुद सद्गुरु हो जाओगे ; स्वयं परमतत्त्व बन जाओगे :-

'सद्गुरु परम दयाल री कोई कदर न जाने ।'
देह धरें जीव भार उठावें, काटें यम का जाल री ॥ कोई०
जीव अनाड़ी जग झख मारें, दुःख सुख संग बेहाल री।
दया मेहर निज बचन सुनावें, मेटें घट दुःख साल री ॥कोई०
छूटन की वह युक्ति बतावें, घट में चलावें चाल री।
दया मेहर से करनी करावें, कर दें मालामाल री ॥ कोई०
घट के बैरी सभी नसावें, मारें काल कराल री।
निसदिन तेरी दया विचारें, जस माता संग बाल री ॥ कोई०

अन्त समय जब तेरा आवे, आप होयँ रखवाल री।
घट तेरे में प्रगट करावें; अपना रूप विशाल री ।। कोई०
पकड़ चरन तू निज घर जावे, काल करम पामाल री।
राधास्वामी सतगुरु मोही आय भेंटे, हो गई मैं खुशहाल री ।।
कोई०

राधास्वामी दयाल परमतत्त्व के अवतार सद्गुरु हर युग में आये हैं लेकिन क्या लोगों ने उनकी क़दर जानी ? वे आते तो हैं जीवों का उद्धार करने के लिए लेकिन क्या सब लोग अपना उद्धार चाहते हैं ? कुछ का होता है, सब का नहीं। सद्गुरु वक्त आते हैं आपको राधास्वामी हालत में पहुँचाने के लिए, जिसमें पहुँचने के बाद आपकी दुनिया की सारी ज़रूरतें अपने आप पूरी हो जाती हैं। लेकिन लोग तो आते हैं सद्गुरु के पास दुनिया की इच्छाओं को पूरा करने के लिए। मैं इसकी निन्दा नहीं करता। आपकी दुनियावी इच्छाएँ भी पूरी होनी चाहिएँ। आप अपने आप में विश्वास नहीं करते। आपके अन्दर भी वही शक्ति है जो मेरे रूप को प्रकट करती है। आपके दुनिया के सारे काम पूरे होंगे बशर्ते कि आपका विश्वास अडिग हो। विश्वास अडिग कब होता है ? जब आप अपने अहंकार को छोड़ देते हो ; जब अपने आपको खाली कर देते हो। जब भी आदमी दुःखी होता है, उसे कोई रास्ता नहीं मिलता ; वह विश्वास को पक्का करता है और अपने आपको खाली करता है। जहाँ आपका मन खाली हुआ नहीं कि ब्रह्माण्डी मन की शक्ति मेरा रूप बनकर आपका काम कर जाती है। मैं नहीं करता। रोज़ ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं। मरे हुए लोग ज़िन्दा हो जाते हैं। एक श्री गुप्ता हैं, कृषक जी के पोते। वो ट्रेन से चन्दौसी जा रहे थे। वो कहते हैं, "महाराज ! शादी के बाद मैं अपनी पत्नी के साथ रेलगाड़ी से चन्दौसी

जा रहा था तो एक इंजीनियर यात्री ने मुझसे कहा—आप कृपया मुझे अपनी सीट दे दें और आप मेरी सीट पर आ जायें। मैं नीचे की सीट पर आ गया और वह बीच की सीट पर मेरी जगह सो गया। इतनी देर में कुछ डाकू आ गये और पिस्तौल तान कर लूटने लगे। इंजीनियर ने कुछ कहा तो डाकू ने उसे शूट कर दिया। वो वहीं मर गया।" असल में गुप्ता, जो सत्संगी है उसे उस सीट पर होना था जहाँ पर इंजीनियर की हत्या हुई पर वह बच गया। ज्यों ही डाकू उसके पास गये, वह और उसकी पत्नी "मानव दयाल-मानव दयाल सुमिरन करने लगे।" डाकू ने कहा "जल्दी पैसे निकालो।" ज़रा देरी हुई और डाकू ने पिस्तौल चला दी। गुप्ता के पीछे एक आदमी खड़ा था, गोली उसको जाकर लगी और वह लहूलुहान हो गया। फिर डाकू ने पिस्तौल चलाई तो वो चली नहीं। फिर उसने चाकू निकाला और खोलने लगा तो चाकू खुला ही नहीं। गुप्ता कहता है कि पच्चीस हज़ार रुपये तो उसकी जेब में थे उसे डाकू ने लिया नहीं, गुप्ता ने बटुआ निकाल लिया जिसमें मानव दयाल जी की फोटो लगी थी। फोटो देखते ही डाकू चले गये। गुप्ता और उसकी पत्नी बच गये। अब बताओ, मुझे तो गुप्ता का नाम तक नहीं नालूम। सिर्फ उसके विश्वास से उसकी रक्षा हुई। तो ये तमाम चीज़ें जिनके लिए आप सद्गुरु के पास जाते हैं, यह तो एक क्षण में हो सकती हैं। लेकिन सद्गुरु आपको वह वस्तु देना चाहता है जिससे आप उसके जैसे ही हो जाते हैं। उसकी कोई क़दर नहीं करता :-

'सतगुरु परम दयाल री कोई क़दर न जानै।'

सद्गुरु के आने का मक़सद क्या होता है? सद्गुरु आपको उस अवस्था में पहुँचा देगा जहाँ काल-करम पामाल हो जाते हैं। आपको दुःख देने वाले काल-करम सारे समाप्त

हो जाते हैं। अन्त में कहते हैं :—

'राधास्वामी सतगुरु मोही आय भेंटे, हो गई मैं खुशहाल री'

तन, मन, बुद्धि और आत्मा, इन चारों के अभीष्ट अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष सब कुछ मिल जाते हैं। अब आपको बताता हूँ कि सच्चे फकीर के क्या लक्षण होते हैं, ताकि आप अगर और कुछ नहीं, तो सन्त सद्गुरु वक्त के सत्संग में आकर सच्चे मन से नमस्कार तो करो :—

'कठिन नाम है कठिन काम है, कठिन फकीर कमाई।
जग के भव दुःख नाशें पल में, जब फकीर जग आई॥'

ये चिन्ह हैं सच्चे सद्गुरु फकीर है। सन्त सद्गुरु वक्त का नाम धराना और उसका काम भी महा कठिन है! सन्त सद्गुरु वक्त के चोले में रहना और यह अवस्था बहुत ही कठिन है। जब मैं उस अवस्था में रहता हूँ, वहाँ न सुख न दुःख, न हानि न लाभ, न गुण, न दोष कुछ भी नहीं होते। लोग कहते हैं महाराज, फलाँ में यह दोष है। मैं सच कहता हूँ, मुझे तो आज तक कोई दोषी मिला ही नहीं और न ही जगत् में कोई दोषी है। मैं इसकी कई मिसालें आपको दे सकता हूँ। मैं पढ़ाता था महाराजा कालेज जयपुर में 1954-55 की बात है। कालेज में प्रोफेसर अपने छात्रों की हाजिरी लगाता है। अगर किसी छात्र की हाजिरी 66 प्रतिशत से कम हो तो उसे परीक्षा से रोक दिया जाता है। पर मैं तो बचपन से जन-हितकारी स्वभाव का था। मैंने कभी किसी छात्र की हाजिरी कम नहीं की। अगर कोई छात्र तीन दिन नहीं आया और चौथे दिन आ गया तो मैं उसकी पूरी हाजिरी लगा देता था। सुरेन्द्र सिंह नाम का सम्पन्न राजपूत घराने का मेरा एक छात्र था। उसकी हाजिरी मेरे रजिस्टर में कम हो गई। उसने मुझे बताया भी नहीं। वह उस साल परीक्षा से रोक दिया गया। दूसरे साल जब कालेज के सालाना खेल-कूद का दिन था, शामियाने

हुए !" तो जिसको लोग बदमाश कहते हैं, उसी ने बदमाश को ठीक कर दिया। कितना पवित्र उसका मन हो गया! आगे चलकर वह सुरेन्द्र सिंह इतना अच्छा एडवोकेट बना। उसका अपना कृषि फार्म है जिसमें उसने नये-नये कृषि आविष्कार किये हैं। राजस्थान ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारत का एक अच्छा कृषक माना जाता है और दूरदर्शन पर प्रोग्राम देता है। मैंने उसे प्यार किया और उसके अन्दर की अच्छाई पनप उठी। मैं कैसे किसी को बुरा मानूं :—

'जो फकीर मोहें दर्शन देवे, अपना भाग सराहूँ।
अपने तन के चाम की जूती, पग फकीर पहिनाऊँ॥
मैं नहीं राम कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नहीं जानूं।
मैं फकीर का नाम दिवाना, सबसे बढ़ कर मानूं॥'

राम का अवतार उस समय के लिए हुआ था जब दुष्टों का संहार करना था। कृष्ण अवतार ने पूजा की विधि को पनपाया। राम-कृष्ण के अवतार या ईश्वर ब्रह्म, जो प्रकाश है, जिससे देवता निकले हैं, इनका महत्त्व है। लेकिन सबसे ज़्यादा महत्त्व है उस परमतत्त्व का, जो शब्द और प्रकाश से होता हुआ मनुष्य के चोले में सद्गुरु बनकर जगत् में आता है और अपने प्रेम से सारे जगत् को ऊपर उठाता है। इसका मतलब यह है कि वही अवतार जब कलियुग में आता है तो राम, कृष्ण आदि सभी अवतारों के लक्षणों को लेकर, साथ ही कुछ नये लक्षणों को लेकर आता है, जीवों को पनपाने व उभारने के लिए। इसलिए सन्त सद्गुरु वक्त की महिमा अधिक है। इसीलिए दाता दयाल जी फ़रमाते हैं कि :—

"मैं नहीं राम-कृष्ण का सेवक, ईश ब्रह्म नहिं मानूं।
मैं फकीर का नाम दिवाना, सबसे बढ़ कर मानूं॥

मेरे साधु हैं शब्द सनेही, सन्त वंश कुल शोभा।
चरन कमल मस्तक पर धारूँ, प्रेम मगन मन छोभा ।।'

दाता दयाल जी जो खुद अवतार हैं, दूसरे अवतार परम दयाल जी के बारे में लिख रहे हैं कि मैं तो तुम्हारे चरणों की धूलि अपने सिर पर धारण करता हूँ अर्थात् भक्त की महिमा बड़ी है। कृष्ण से राधा बड़ी है तभी तो हमेशा कृष्ण "राधा-राधा" कहते थे। अगर तुम्हारी राधा नहीं बनी तो तुम्हारा स्वामी नहीं बनेगा। अगर तुम्हारा लोक नहीं बना तो परलोक नहीं बनेगा। राधाकृष्ण या राधास्वामी एक ही चीज़ है। स्वामी जी ने कहा है - राधा राधा है, स्वामी कृष्ण कन्हाई हैं। मगर कृष्ण को परमतत्त्व मानो; शरीर न मानो। कृष्ण-भक्ति तो विख्यात है। कृष्ण-भक्ति को कोई समाप्त नहीं कर सकता ; चाहे लाख डेरे बन जायें राधास्वामी के या कहीं के। कृष्ण तो परमतत्त्व के अवतार हैं और वही परमतत्त्व मनुष्य के रूप में आता है। महाराज बूंदी के दरबार में एक कृष्ण-भक्त कवि था, वह कृष्ण-भक्ति के बारे में कहता है :—

'यदि न होता राधा का रकार,
तो राधेश्याम आधेश्याम रह जाते।'

'रा' कहते हैं स्त्री को। अगर राधेश्याम में से 'र' निकाल दो, तो आधेश्याम रह जाता है। (राधा के बिना श्याम अधूरे हैं ; राधे के बदौलत ही श्याम पूरे हैं) भक्त भी वही है, जो भगवान् है। अन्तर केवल अवस्था का है :—

'एक घड़ी साधु की संगत, कटे मोह यम फाँसी।
मेरी नज़र में साधु फकीरा, सत् चित् आनन्द रासी ।।'

ऐसे निर्बन्धपुरुष की संगत में आने से ही आपका काम बनेगा। 'एक घड़ी साधु की संगत कटे कोटि यम फाँसी।' यम की फाँसी मोह के कारण है। साधु आपके मोह

म में परिवर्तित कर देंगे, जैसे राधा का कृष्ण से प्रेम था। प्रेममार्ग पराभक्ति का मार्ग है। इष्ट धारण करो और रात-दिन लगातार इष्ट-इष्ट का नाम जपा। मीरा ने इष्ट का नाम जपते-जपते पत्थर से, इष्ट को प्रकट कर दिया। तो तुम प्रेम से इष्ट के नाम को ऐसा जपो, ऐसा पक्का करो, चाहे किसी रूप में—पिता मान कर चलो, पुत्र मान कर चलो, भाई मानकर चलो, सखा मान कर चलो, चाहे मीरा की तरह आत्मिक पति मान कर चलो और नहीं तो तुम शत्रु मान कर ही चलो। सभी पहुँच गये कि नहीं! बालि ने भगवान् का विरोध किया था। भगवान् ने उसको मारा। बालि बोला—"आये थे भक्तों को तारने के लिए और मुझे व्याध की तरह छिप कर मारा! तुमने मेरे साथ अन्याय किया।" राम ने कहा, "बालि, कहो तो अभी तुम्हें जिन्दा कर दूँ!" वह बोला, "नहीं महाराज! इसीलिए तो मैंने यह अपराध किया कि आप मुझे अपने हाथों से मारो और मैं सीधे परमतत्त्व में समा जाऊँ।" कहने का भाव यह है कि कोई सम्बन्ध जोड़ लो जीवित-जागृत सद्गुरु वक्त के साथ, तो तुम सीधे परमतत्त्व में चले जाओगे। यह परा-प्रेम, परा-भक्ति का रास्ता है। इस मार्ग में केवल भक्ति और प्रेम है। केवल अपने अहंकार को मिटा देना है। इष्ट-इष्ट का जाप करो और इष्ट से किसी रूप में प्रेम का नाता जोड़ लेना है :—

'जो फकीर का दर्शन पाऊँ, चरन सरोज पर वारूँ।
आप तरूँ उनकी शरनाई, औरों की संग तारूँ॥
साधु की संगत गुरु की सेवा, सहजहि काम बनावे।
जिस पर साधु की दृष्टि पड़ गई, फिर जग योनि न आवे॥'

ऐसे निर्द्वन्द्व, निर्बन्ध, निःस्वार्थ प्रेम के भण्डार सद्गुरु के परिवेष में जो रहते हैं, वो भी वैसे ही बन जाते हैं।

इसमें कोई शक नहीं। आज मैं यहाँ सत्संग दे रहा हूँ; यहाँ का वातावरण भी ऐसा ही है। आप चाहे कुछ मत करो; अगर सत्संग सुन रहे हो, तो अच्छी बात है। आपके मन पर पड़े पिछले जन्मों के पर्दे पर पर्दे हटाये जा रहे हैं। यह वातावरण का प्रभाव है। जो इस परिवेष में आता है, उसमें सिद्धि-शक्ति आ जाती है, आप में भी आ जावेगी। यह साधना शब्द पढ़ रही है, यह शब्द पढ़ती है, मैं कहता हूँ कि बहुत अच्छा पढ़ती है क्योंकि यह शब्द पढ़ने में लीन हो जाती है। इसके शब्द पढ़ने से जो वातावरण बनता है वो सब के लिए हितकारी है।

वातावरण का प्रभाव होता है। मेरे साथ रहोगे तो तुम्हें जबर्दस्ती फकीर बनना पड़ेगा। सफाई होती चली जा रही है। जब तुम प्रेम करोगे, तो मैं मजबूर हूँ प्रेम करने को क्योंकि मैं तो सबसे प्रेम करने के लिए ही आया हूँ :—

'जिस पर साधु की दृष्टि पड़ गई, फिर जग योनि न आवे।'

सद्गुरु की प्रेम और एकत्व की दृष्टि तब पड़ती है जब तुम सब कुछ भुला करके अपने आपको समर्पित कर देते हो। समर्पित करके तुमने मुझे ले लिया। 'तू' 'मैं' हो गया; 'मैं' 'तू' हो गया। यह है परा-भक्ति का मतलब। केवल प्रेम ही ऐसी अवस्था में ऊपर ले जाता है। मैंने परम दयाल जी महाराज से कुछ नहीं माँगा। कोई पैसा माँगते हैं, कोई कुछ माँगते हैं, कोई कुछ माँगते हैं। मैंने कुछ नहीं माँगा तो उन्होंने अपने आपको मुझे दे दिया और कहा "तुम मेरी जगह काम करो :—

'जिस पर साधु की दृष्टि पड़ गई, सो जग योनि न आवे।'

लेकिन साधु की दृष्टि तब पड़ेगी जब तुम अधिकारी प्रेमी होगे। हालाँकि साधु का प्रेम तो पहले ही से था,

तुम्हारा प्रेम बाद में हुआ। तुमने सद्गुरु को नहीं चुना, सद्गुरु ने तुमको चुना :—

ग़लत हैं वो जो कहते हैं, नहीं बुलबुल पे गुल शैदा।
कि पहले इश्क होता है, दिले-माशूक में पैदा॥

तुम समझते हो कि बुलबुल गुल को प्यार करता है, गुल बुलबुल को प्यार नहीं करता। लेकिन सच यह है कि पहले गुल के दिल में ही प्यार पैदा हुआ तब बुलबुल गुल की तरफ आकर्षित हुआ। अरे! मालिक ने तुम्हें खींचा अपनी ओर तुम उसकी ओर खिंच गये :—

'जिस पर साधु की दृष्टि पड़ गई, फिर जग योनि न आवे।'

यों तो साधु की दृष्टि सब पर पड़ती है लेकिन दया की दृष्टि किसी अधिकारी पर ही पड़ती है। मैखाने में साकी शराब पिलाता है। सद्गुरु के दरबार में आत्मिक शराब पिलाई जाती है तो साकी पर हर एक की दृष्टि रहती है कि मेरा पैमाना खाली है। जिसका पैमाना खाली है, उसका पैमाना ही भरा जायेगा। जो अपना पैमाना पहले से ही भरे बैठा है, जो कहता है—मैंने भगवद्गीता पढ़ी है, मैं यह जानता हूँ, वह जानता हूँ, उसका पैमाना साकी कैसे भरेगा? वह तो खाली ही रहेगा :—

'सब की साकी पे नज़र हो, ये ज़रूरी है मगर।
सब पे साकी की नज़र हो, ये ज़रूरी तो नहीं।'

नज़र तो होगी लेकिन पड़ेगी उस पर जो अधिकारी होगा, जो प्रेममय हो गया है :—

'तरवर सरवर मेघ का पानी, औरों को सुखकारी।
वैसे ही सुन मेरे फकीरा, साधु परउपकारी॥'

जो साधु या फकीर है उसका प्रेम, उसकी दया, धारा-प्रवाह बह रही है, क्योंकि उसके अन्दर इतना प्रेम संचित हो गया है, मालिक से उसने इतना ले लिया है, इतना ले

लिया है कि वह उँडेल रहा है। उसने देने के लिए ही लिया है, अपने लिए नहीं। सन्तमत, राधास्वामी मत या मानवता धर्म में जो सद्गुरु का काम करता है, उसे अपनी रोज़ी आप कमानी चाहिए। वे सत्संगियों के पैसे को अपने लिए इस्तेमाल नहीं करते। मेरी तो पेन्शन आती है अमरीका से हजारों रुपये महीने की। किताबों से रुपया आता है वहाँ के मकान का किराया आता है। अगर मैं आपके पैसे पर रहूँ तो मैं सच्चाई नहीं कह सकता। आपकी खुशामद करूंगा। इसलिए जो पैसा आप मानवता मन्दिर को भेजते हैं, वह तब भेजें जब आप अपना और अपने बच्चों का सब इन्तज़ाम कर लें क्योंकि आपका एक रुपया भी एक लाख के बराबर है। मानवता मन्दिर में बच्चों का स्कूल भी है, अस्पताल भी है, लाइब्रेरी और प्रेस भी है, सब है लेकिन हम किसी से माँगते नहीं ; अपने आप भेजते हैं लोग पैसा। मन्दिर का ट्रस्ट है। एक-एक पैसे पर हमने प्रतिबन्ध लगाया हुआ है। और यह लिया किसलिए जाता है? आज बारह हज़ार "मानव मन्दिर" पत्रिका प्रतिमाह छपती और मुफ्त वितरित होती है सब को। हमारा लेना भी सब को देने के लिए है :—

'आदानमपि विसर्गाय सताम्।'

जैसे सूर्य समुद्र से पानी खींचता है सबको देने के लिए, वैसे ही साधु, सरवर, तरुवर और मेघ का पानी औरों के हित के लिए होता है :—

'तू फकीर बन तू फकीर बन, तू फकीर बन भाई।
मैं भी तरूँ फकीर चरन लग, ऐ फकीर सुखदाई॥
सुन ले कथा सुनाऊँ तुझको, प्रगटे बिमल विवेका।
जीव अनेक रहें जग अन्दर, पर फकीर कोई एका॥'

सद्गुरु अवतार दाता दयाल जी अपने शिष्य अवतार परम दयाल जी से कह रहे हैं—"भाई, तू फकीर बन; कि मैं भी फकीर के चरणों में लग कर भवसागर से तर जाऊँ।" तो यह अवस्था होती है जब एक परमतत्त्व अवतार दूसरे परमतत्त्व अवतार को जगाता है, ताकि यह जीव को जगाने और तारने की परम्परा चलती रहे। सद्गुरु वक्त एक को ही अपने जैसा बनाता है बाकी गुरु तो हो सकते हैं, पर सन्त सद्गुरु वक्त एक होता है। इसलिए उन्होंने आखर में कहा :

'सुन ले कथा सुनाऊँ तुझको, प्रगटे विमल विवेका।'

तुम्हें ऐसी कथा सुनाता हूँ जिससे तुम्हारी बुद्धि में एक नया ज्ञान का प्रकाश हो जाये। वह ज्ञान क्या है ?

'जीव अनेक रहें जग अन्दर, पर फकीर कोई एका।'

इस जगत् में अनेक प्रकार के जीव हैं; सत्संगी हैं, साधु हैं, हंस हैं, परमहंस हैं, सन्त-परमसन्त हैं पर सद्गुरु फकीर बस एक ही होता है। इसका मक़सद है आपको समझने-समझाने के बाद आपका रास्ता सहज हो जाता है; आपके लोक-परलोक दोनों बन जाते हैं।

सत्संग काफी लम्बा हो गया लेकिन अगर आपने इसको सुना है तो इसका लाभ आपको अवश्य ही होगा।

सबको राधास्वामी !

शोक समाचार

बड़े दुःख के साथ सूचित किया जाता है कि मुजफ्फर-नगर निवासी श्री मदन लाल भटनागर की धर्मपत्नी श्रीमती सरला देवी का स्वर्गवास दिनांक 24-5-87 को हो गया।

मानवता मन्दिर परिवार हार्दिक दुःख प्रकट करते हुए मालिक राधास्वामी दयाल से प्रार्थना करता है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति दें तथा उनके शोकाकुल परिवार को सहन-शक्ति प्रदान करें।

जनरल सेक्रेटरी

Telegram : MANAVTA Phone No. 2022

Faqir Library Charitable Trust (Regd.)

BE MAN ENTIRE, WHOLE AND IN EVERY THING.

MANAVTA MANDIR
(ORIGIN OF HUMANITY)
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR.
PUNJAB—(INDIA)

Ref. No. एफ. एल सी. टी./63-64 तिथि 9-7-87

सेवा में

श्री राज कुमार "हमदर्द"
प्रान्तीय कन्वीनर,
भारतीय बाल्मीकि धर्म समाज (रजि०),
भावाधस-शाखा, चण्डीगढ़ ।

विषय :-भगवान् वाल्मीकि जी महाराज के कथित प्रतिकूल प्रकाशित अंक का स्पष्टीकरण ।

मान्यवर महोदय,

सादर प्रणाम !

मैं डा० परस राम जी की ओर से और समस्त मानवता मन्दिर की ओर से आपको सविनय यह पत्र भेज रहा हूँ । हमारी संस्था हिन्दु संस्था नहीं है, बल्कि यह सन्तमत, कबीर पन्थ और सन्त रैदास आदि के आदर्शों पर चल रही है । हमारी ओर मे आपको जो पत्र दिनांक 4-5-87 को भेजा गया था, उसको हमने रद्द कर दिया हैऔर इसलिए वह स्पष्टीकरण हमने 'मानव मन्दिर' में नहीं छपवाया है । हमने दिनांक 1-6-87 को जो स्पष्टीकरण आपको भेजा था, उसे हमने जून के 'मानव मन्दिर' में पृष्ठ 62 पर छपवा दिया था, जिसकी प्रति आपको भेजी जा रही है ।

हम आप से इस बात में पूरी तरह सहमत हैं कि सवर्ण लेखकों ने भगवान् वाल्मीकि जी के बारे में अनर्गल

आधार बातें लिखी हैं। इतना ही नहीं, बल्कि हम आप की संस्था को हर प्रकार की सहायता देने को तैयार हैं ताकि सभी उस आदर्श को अपनायें जिसके अनुसार सन्त कबीर ने कहा है :—

'जाति पाँति पूछे नहिं कोई,
हरि को भजे सो हरि का होई।'

हमारी यह भावना केवल भावना ही नहीं है ; हम इसे हर प्रकार से साकार बना रहे हैं। हम आपको यह पूर्ण विश्वास दिलाते हैं कि हमारा दिनांक 4-5-87 का पत्र बिलकुल रद्द है और उसके पृष्ठ १ के अन्तिम पैराग्राफ से लेकर पृष्ठ २ के चौथे पैराग्राफ तक जिन पुस्तकों के हवाले दिये गये हैं, हम उनसे बिलकुल सहमत नहीं हैं। पृष्ठ २ के अन्तिम पैराग्राफ में हमने लिखा था कि हजूर मानव दयाल जी महाराज के विदेश से लौटने पर विस्तारपूर्वक उत्तर दिया जायेगा। हजूर ने फ़रमाया है कि पृष्ठ २ के दूसरे और तीसरे पैराग्राफों में दी गई व्याख्याएँ बिलकुल ग़लत हैं और उन्हें डा. परस राम द्वारा दिया गया यह उत्तर बहुत दुःखद लगा है। अतः हजूर ने आपके 14-5-87 के पत्र के आधार पर कहा है कि 4-5-87 वाला पत्र रद्द कर देना चाहिए और उसे प्रकाशित नहीं करना चाहिए।

आपने हमारे दिनांक 1-6-87 वाले पत्र में देखा होगा कि हम इस बात से सहमत नहीं हैं कि भगवान् वाल्मीकि जी ने 'मरा-मरा' जपा। उन्होंने असली राम का अनुभव किया था। राम के प्रकट होने से हजारों वर्ष पूर्व रामायण लिख दी थी। उसी रामायण को शंकर ने अपने मन में रखा और भगवान् वाल्मीकि द्वारा बोले गये 'राम' शब्द को अपने हृदय में रखकर उसी का जाप करते हुए अमृत-

मंथन के समय विष पिया था। यह बात हमारे बहुत से सत्संगों में कही गई है।

आपके प्रति न केवल हमारी सद्भावना ही है, बल्कि सच्चा प्रेम है। हमें मालूम नहीं था कि आपका धर्म समाज चण्डीगढ़ में है। हम आपकी भावनाओं का पूरा आदर करते हैं और इस पत्र को भी हम 'मानव मन्दिर' में प्रकाशित कर देंगे।

हम सच्चे दिल से आपकी भावनाओं को धक्का लगने के लिए आप से क्षमा-याचना करते हैं। भगवान् वाल्मीकि, जिन्हें हम प्रेम का अवतार मानते हैं, जो आपके आदर्श हैं, वह हमारे भी आदर्श हैं। हम सब आपस में भाई-भाई हैं और सारे विश्व में भाईचारा फैलाने को उत्सुक हैं। आपका उत्तर आने पर हम इस क्षमा-याचना पत्र को 'मानव मन्दिर' में प्रकाशित कर देंगे। आशा है आप इस पत्र का उत्तर शीघ्रातिशीघ्र देंगे।

आपका शुभचिन्तक
एस. एल. सेठी
जनरल सेक्रेटरी
फकीर लायब्रेरी चेरिटेबल ट्रस्ट

पुनः

हमें पूरी आशा है कि आप हमारे इस स्पष्टीकरण से सन्तुष्ट होंगे और भविष्य में हम दोनों संस्थाएँ मिलकर विश्व में सच्चाई का प्रचार करेंगे।

उपर्युक्त पत्र की प्रतियाँ निम्नलिखित को सूचनार्थ भेजी जा रही हैं :—

(1) सार शब्दाचार्य वीरेश मोती लाल जी "विकल", मुख्य संचालक, WZ/J-88 बाल्मीकि आश्रम, उत्तम नगर, नई दिल्ली।

(2) वीर मंगल राय "दानव" महामन्त्री, बाल्मीकि मन्दिर, न्यू सब्जी मन्डी, मलोट, जिला फरीदकोट (पंजाब)।

, वीर श्रेष्ठ देव सिंह "असुर" मुख्य कोषाध्यक्ष, वाल्मीकि लायब्रेरी एण्ड रिसर्च सेंटर, 201, धेवर नगर, संगरुर (पंजाब)

(4) वीर दर्शन रत्न "रावण", मख्य प्रचार मन्त्री, 1919, वाल्मीकि मन्दिर, निकट सिविल हस्पताल, (लुधियाना)।

शोक समाचार

सत्संगियों को बड़े दुःख के साथ सूचित किया जाता है कि नई दिल्ली निवासी श्री देव सहगल के बड़े भाई श्री एम. एम. सहगल का 13-5-87 को स्वर्गवास हो गया। श्री सहगल अत्यन्त श्रद्धालु और प्रेमी सत्संगी थे।

मानव मन्दिर परिवार श्री सहगल के निधन पर हार्दिक दुःख प्रकट करता है और मालिक राधास्वामी दयाल से प्रार्थना करता है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति दें और शोकाकुल परिवार को सहन-शक्ति प्रदान करें।

जनरल सेक्रेटरी

पत्र प्रतिलिपि श्री राज कुमार "हमदर्द", प्रान्तीय कन्वीनर, भारतीय वाल्मीकि धर्म समाज (रजि०) भावाधस-शाखा, चण्डीगढ़ बनाम जनरल सेक्रेटरी, मानवता मन्दिर, होशियारपुर।

अंक भावाधस/2180 दिनांक 23-7-87

सेवा में,

आदरणीय एस. एल. सेठी जी,
जनरल सेक्रेटरी,
फकीर लायब्रेरी चेरिटेबल ट्रस्ट (रजि.),
होशियारपुर।

प्रिय बन्धु,

आपका पत्र नम्बर एफ. एल. सी. टी./67-68 दिनांक 20-7-87 आज ही प्राप्त हुआ जिसे पढ़कर बहुत खुशी प्राप्त हुई। आपने सत्यता के आधार पर हिन्दु संस्कृति के जन्मदाता भगवान् वाल्मीकि जी महाराज को पूर्ण रूपेण 'भगवान' माना इसके लिए आप का बहुत-२ धन्यवाद। हमारे समाज के सभी बुद्धिजीवी आप के पत्र-व्यवहार तथा आपकी हार्दिक सद्भावना से बहुत प्रसन्न तथा प्रभावित हैं।

आप को यह पत्र भी प्रकाशित करने की अनुमति दी जाती है तथा हमें पूरा विश्वास है कि आप भविष्य में इसी प्रकार व्यावहारिक रूप में आचरण करके जन-कल्याण हित पूर्ण सहयोग देते रहेंगे।

धन्यवाद सहित, जय वाल्मीकि।

भवदीय

हस्ताक्षर - R. K. Hamdard
23-7-87

(राज कुमार "हमदर्द")
Prantiya Convener,
Bhartiya Valmeki Dharma Samaj (Regd.)
Prantiya Sangthan, Chandigarh.

मासिक सन्देश

परमसन्त हजूर मानव दयाल

डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरे परम प्रिय सत्संगियो !

राधास्वामी, परम दयाल जी सहाई !

पिछले मासिक सन्देश में मैंने स्विटज़रलैण्ड की यात्रा के बारे में आपको जानकारी देते हुए कुछ घटनाओं को बहुत ही संक्षेप में बताया था। खासकर मैंने श्री जी. वर्मा के घर पर बर्न (Berne) में पारिवारिक सत्संग की चर्चा करते हुए यह नहीं बताया था कि मैं स्विटज़रलैण्ड के जनवरी वाले दौरे में भी उनके घर गया था। श्री वर्मा स्विटज़रलैण्ड की एक विख्यात हैसलर (Hasler) कम्पनी में एक ऊँचे पद पर इंजीनियर हैं। पहली बार जब मैं उनके घर गया था तो मुझे यह जानकर खुशी हुई थी कि श्री वर्मा बड़े श्रद्धालु, फ़राखदिल और प्रेमी व्यक्ति हैं, जिनका सारा परिवार धार्मिक है। पिछली बार उनकी माता जी भी उनके साथ रह रही थीं। विशेष बात यह है कि इनकी माता जी राधास्वामी मत की हैं। पिछली बार भी श्री वर्मा के घर पर मैंने भोजन के बाद पारिवारिक सत्संग दिया था। उनके प्रेम से प्रभावित होकर मैंने उस समय अचानक यह शब्द

कह दिये, "श्री वर्मा तुम्हें बहुत जल्दी तरक्की मिल जायेगी।" मैं अपने आपको कोई सिद्ध नहीं मानता। श्री वर्मा के प्रारब्धकर्मों के कारण ही दूसरे ही दिन उनकी तरक्की हो गई। और उनके वेतन में 40% बढ़ोतरी हो गई। उनको इतनी अधिक खुशी हुई कि उन्होंने अपने दफ्तर से मुझे टेलीफोन पर कहा "महाराज जी! मेरी तरक्की के बारे में आपके आशीर्वाद ने एक दिन में फल दे दिया।"

मेरे प्यारे सत्संगियो! आपको यह हमेशा याद रखना चाहिए कि आपको धन, सम्पत्ति और यश आदि आपके अपने विश्वास, आपके पिछले जन्मों के शुभ कर्मों और आपकी अपने इष्ट की भक्ति के कारण ही मिलते हैं। आपका वह इष्ट ईश्वर या गुरु का कोई रूप हो सकता है जिसको आपने स्वीकार किया है। इस सच्चाई को सारे विश्व में इसलिए फैलाना चाहिए ताकि भोले-भाले करोड़ों सत्संगी उन पाखंडी गुरुओं का शिकार न हो जायें जो उन्हें यह झूठा विश्वास दिलाते हैं कि गुरु का शारीरिक रूप उनकी मदद करता है।

अगर आप में पूरा विश्वास है, आप सच्चाई पर चल रहे हैं और आप जानबूझ कर अपनी तरफ से किसी को दुःख नहीं देते, आपको मस्तक में, दोनों भौंहों के बीच में, ध्यान लगाकर अपने किसी भी इष्ट राम, कृष्ण, ईसामसीह या जीवित गुरु की मूर्ति बनाने की कोशिश करनी चाहिए। यदि आप अपने इष्ट से अगाध प्यार करते हैं तो आप लाल प्रकाश में उसके आकार को देखेंगे। उस वक्त आप जो भी इच्छा करेंगे वह पूरी हो जायेगी। इस प्रकार तुम्हारे पक्के विश्वास, प्यार और मन की एकाग्रता से तुम में ऐसी हालत पैदा हो जाती है जिसमें चमत्कार होते हैं। तुम्हीं चमत्कारों के पैदा करने वाले हो। अगर आप गुरु को या ईश्वर को केवल प्रेम के लिए प्रेम करते हैं तो आप चमत्कारों से ऊपर

उठ कर पूर्ण बन जायेंगे। मैं चाहता हूँ कि आप इस सच्चाई को समझें। मुझे करीब-करीब हर हफ्ते सत्संगियों की चिट्ठियाँ आती हैं जिनमें लिखा होता है कि मेरा रूप प्रकट होकर उनकी मदद करता है और उन्हें दुर्घटनाओं से, मृत्यु से और रोगों से बचाता है। मैं यह बिलकुल सच कह रहा हूँ कि मुझे मेरे इस प्रकट होने का कुछ भी ज्ञान नहीं होता। उनका अटूट विश्वास, उनका आत्म-समर्पण और उनका प्यार ही उन्हें इन स्थितियों में मदद करता है। जब मैं कभी अनायास कुछ कह देता हूँ या आशीर्वाद दे देता हूँ और वह सत्य सिद्ध हो जाता है, तब भी उसका श्रेय मुझे नहीं मिलना चाहिए। कारण यह है कि मैं आपके सच्चे प्यार और आपकी सद्भावना के वश में आकर जो कुछ कह देता हूँ, वह सचमुच हो जाता है। बात तो यह है कि तुम्हारे पिछले जन्मों के अच्छे कर्म ऐसी हालत पैदा करते हैं। इसी प्रकार श्री वर्मा के विश्वास और उनके प्रारब्ध-कर्मों ने उनकी तरक्की कराई। मैं तो केवल परमपुरुष का उस समय निमित्त बन गया था क्योंकि ऐसी हालत में मेरा अपना स्वार्थ नहीं होता है, इसलिए जो भी आशीर्वाद मेरे मन से अनायास निकल जाता है वह सत्संगियों के शुभ कर्मों को उभार देता है और वे भोले-भाले सत्संगी उसका श्रेय मुझे दे देते हैं।

जितना अधिक मैं यह सच्चाई कहता हूँ और जितना अधिक मेरा प्यार निःस्वार्थ होता है उतना ही ज्यादा तुम्हारा विश्वास पक्का होता है और तुम्हें ज्यादा से ज्यादा लाभ मिलता है। मैं आप सबको चमत्कारों से ऊपर उठाना चाहता हूँ। जब आपको मेरे रूप के या किसी दूसरे गुरु के रूप के प्रकट होने से चमत्कार का अनुभव होता है तो ऐसा होना इस बात को साबित करता है कि आपका गुरु में विश्वास अडिग है। लेकिन आप यह समझ लेते हैं कि उस

गुरु के शरीर में सिद्धिशक्तियाँ हैं। मेरे प्यारे सत्संगियो, इन सभी अनुभवों का आधार तुम्हारा प्यार है। मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि मेरा असली रूप, मेरी असली ज़ात सत्पुरुष राधास्वामी दयाल, परात्पर ब्रह्म या अनामी पुरुष है। चाहे आप उसे कुछ भी कह लो; मेरा वह असली रूप न शरीर है, न मन है, न आत्मा है, लेकिन वह है ज़रूर। जब तुम अपने इष्ट को केवल शारीरिक और केवल मानसिक व्यक्ति मान लेते हो तो तुम्हें उसके शारीरिक और मानसिक रूप का ही लाभ मिलता है। इसमें कोई शक नहीं कि तुम्हारे लिए गुरु का ऐसा प्रकट होना झूठा नहीं है लेकिन उस पूर्ण गुरु के लिए यह (चमत्कार) केवल भ्रममात्र है। गुरु यह जानता है कि उसकी ज़ात शारीरिक, मानसिक और आत्मिक सभी स्तरों से ऊपर है इसलिए अगर आप अपने गुरु को पूर्ण परमतत्त्व मानकर प्यार करोगे तो आप भी उसी गुरु की तरह पूर्णता का अनुभव करोगे। यह तभी हो सकता है जब गुरु सच्चा हो और इस सच्चाई के आधार पर इस बात से इन्कार करता हो कि जो शारीरिक रूप सत्संगियों को दिखाई देता है वह उसका असली रूप नहीं है। मैंने यह अनुभव किया है कि इस सच्चाई को कह देने से सत्संगियों का विश्वास टूटता नहीं है। इसके विपरीत जब मैं उन्हें यह सच्चाई बताते हुए कहता हूँ और उन्हें इस बात का आभास कराता हूँ कि मेरा असली घर और मेरा असली रूप इन चमत्कारों से परे है, उस वक्त उनका विश्वास ज्यादा पक्का और ऊँचा हो जाता है। अशिक्षित से अशिक्षित भोले-भाले सत्संगी भी रूहानियत के सब से ऊँचे स्तर पर पहुँचने की इच्छा करते हैं।

इसी प्रकार स्विटज़रलैण्ड में मैंने जो सत्संग भारत के राजदूत के घर पर दिया था उसे भी पिछले मासिक सन्देश

तरह से नहीं दिया गया था। मैंने यह तो आपको बताया था कि स्विटज़रलैण्ड के भारतीय राजदूत महामहिम श्री अशोक एस. विब ने मुझे पिछली बार भी यह कहा था कि विश्व में मानवता धर्म की आवश्यकता है। इस बार उन्होंने अपने निवासस्थान पर स्विटज़रलैण्ड के कुछ चुने हुए बुद्धिवादी और रूहानियत में दिलचस्पी लेने वाले स्त्री-पुरुषों को और कुछ भारतीयों को भी बुलाया था। जैसा कि मैंने पहले बताया है, यह सत्संग 23 अप्रैल को हुआ था। मैंने इस सत्संग में पश्चिमी लोगों को समझाने के लिए सरल भाषा में सुरत-शब्द योग की व्याख्या की। मैंने यह व्याख्या देते हुए उन्हें बताया कि यहूदी पैगम्बर (गुरु) मूसा ने और ईसाई अवतार ईशू (क्राइस्ट) ने इसी योग का अभ्यास किया था और उसका प्रचार किया था। मैंने उनकी जानी-पहचानी भाषा में ही मनुष्य का ईश्वर से, राधा का स्वामी से जो सम्बन्ध है, उस गुप्त सच्चाई को प्रकट किया। मैंने ऐसी भाषा का प्रयोग किया जो पुरानी और नई इंजील में मिलती है। मैंने मनुष्य के ईश्वर से साक्षात्कार को समझाने के लिए होली बाइबिल से मिसालें दीं। सभी पश्चिमी विद्वानों ने इस बात को स्वीकार किया कि सभी धर्मों के अनेकत्व के पीछे एकत्व है। सभी लोगों ने सत्संग को बहुत पसन्द किया। स्विटज़रलैण्ड के एक विद्वान् ने मुझसे अलग में मिलने के लिए समय माँगा। मैंने उसे दूसरे दिन आधा घण्टा का समय दिया। मुझे आश्चर्य हुआ कि जब वह मुझे मिलने आया तो उसने सुरत-शब्द योग की दीक्षा लेनी चाही। मैंने उसकी इस इच्छा को पूरा किया और अब वह हित-चित से सुरत-शब्द योग का अभ्यास करता है।

जहाँ तक अमेरिका के दौरे का सम्बन्ध है, मैंने आपको

पिछले मासिक सन्देश में बताया था कि हम 7 मई को लगभग 4 बजे सायं न्यूयार्क पहुँच गये थे। हम उसी रात को थैल्मा कार्टर के साथ श्री सुदर्शन लाल के घर ठहरे। दूसरे दिन हमें एक पंजाबी युवा दम्पति मिले। इनका नाम बलविन्दर सिंह और सुनीला है। सुनीला ने मुझे बहुत पहले पत्र लिखा था कि उसका पति एक नया रैस्टोरैण्ट चलाना चाहता है। मैंने उसे पहले ही इस सम्बन्ध में आशीर्वाद भेज दिया था। जब ये दोनों 8 मई को ग्लैन रॉक (Glen-Rock) में सुदर्शन लाल के घर मुझे मिलने के लिए आये तो उन्होंने कहा कि उसी दिन सायंकाल 7 बजे उनके नये रैस्टोरैण्ट का उद्घाटन था। बलविन्दर सिंह नकोदर (पंजाब) का रहने वाला है और सुनीला का परिवार बम्बई में रहता है। मैंने सायं 7 बजे उनके रैस्टोरैण्ट का उद्घाटन किया। दूसरे दिन प्रातःकाल हमने श्री सुदर्शन लाल के उस नये दफ्तर का मुहूर्त किया जिसमें वह अपना स्वतन्त्र रासायनिक शोध का काम शुरू करना चाहता है। 9 मई सायंकाल हम आचार्या थैल्मा कार्टर की कार से मेरीलैंड पहुँचे और रात्रि-विश्राम मेरीलैण्ड के गेटर्ज़ बर्ग शहर में श्री जौन कार्टन और श्रीमती सूजन कार्टन के घर पर किया। दूसरे दिन सायंयाल 5 बजे सिल्वर स्प्रिंग नगर में श्रीमती थैल्मा कार्टर के घर पर सत्संग आयोजित हुआ। मैंने कई बार आचार्या थैल्मा कार्टर के बारे में मासिक सन्देशों में लिखा है। इस बार थैल्मा कार्टर ने सिल्वर स्प्रिंग नगर में नया फ्लैट लिया है। यह फ्लैट 17वीं मंजिल पर है। इस सत्संग में दूर-दूर से लोग आये हुए थे जिनमें मुख्य डा. पीटर्स, श्रीमती मिल ड्रिड मैकीनी, श्रीमती ज़ीटा, श्रीमती एश्ठर, श्री जौन कार्टन और श्रीमती सूजन कार्टन थे। यह सत्संग बहुत ही प्रभावशाली रहा। 11 मई को हम प्रातःकाल वाशिंगटन से

ई जहाज़ के द्वारा क्लीवलैंड के लिए रवाना हो गये। श्री जौन कार्टन और श्रीमती सूजन कार्टन अपने घर से 30 मील दूर हवाई अड्डे पर हमें छोड़ने के लिए आये।

11 और 12 मई को क्लीवलैंड में रहने के बाद हम 13 मई प्रातःकाल क्लावलैंड से हवाई जहाज़ से ग्रीन बे विस्कोन्सिन के लिए रवाना हो गये और उसी दिन 11 बजे के करीब वहाँ पहुँचे। ग्रीन बे में श्री अजीत कुमार के सुपुत्र श्री अजय कुमार का शुभ विवाह 16 मई को होना था। श्री अजीत कुमार का सारा परिवार परम दयाल जी से और मेरे से बहुत प्रेम रखता है। जब-जब भी मैं वहाँ जाता हूँ सभी बच्चे, श्री अजीत कुमार और उनकी पत्नी रमेश दिन-रात मेरे पास रहते हैं। सारा दिन सत्संग ही चलता रहता है। प्रातःकाल 6 बजे श्री अजीत कुमार मेरे साथ करीब डेढ़ घण्टे के लिए सैर को चलते हैं। इस दौरान में हमारा दोनों का बहुत गहरा सत्संग चलता रहता है। श्री अजीत कुमार कोई प्रश्न करते हैं, उसके उत्तर में मुझे काफी देर तक सन्तमत की सच्चाई और कबीर साहिब के अति गूढ़ शब्दों के आधार पर परम दयाल जी के विचारों को अपने अनुभव के साथ मिलाकर सरल भाषा में बताना पड़ता है। हमारा यह प्रातःकाल का सैर का सत्संग इतना रोचक और गहरा हो जाता है कि हमें पता ही नहीं चलता कि हम कितने मील चल चुके हैं। सत्संग वास्तव में तभी लाभदायक होता है, जब प्रश्न करने वाला सत्संगी अपने अनुभव के आधार पर अपनी शंका को मिटाने के लिए सवाल करे। केवल सवाल के लिए सवाल करना सत्संग नहीं है। जब सत्संगी के अन्दर मालिक को मिलने की तड़प होती है और वह उस तड़प से प्रेरित होकर दर्दे-दिल से पूरी श्रद्धा के साथ प्रश्न करता है तो उसे पूरा लाभ होता

है। उस समय सद्गुरु के उत्तर देने में जो शब्द प्रवाहित होते हैं वे रिस-रिस कर सत्संगी के दिल में प्रवेश करते हैं और वह उन शब्दों से ऐसा ही आनन्द लेता है जैसे कोई आदमी शर्बत के हर घूंट को आनन्द से गले के नीचे उतारता है।

अजीत कुमार का और मेरा यह सत्संग उतने दिन लगातार चलता रहता है जितने दिन मैं उनके घर रहता हूँ। इसके अलावा कई बार हम सन्ध्या की सैर को भी जाया करते हैं और हमारा सत्संग चलता रहता है। मैं स्वयं इन सैर के सत्संगों में अपने आपको खो देता हूँ। चलते-चलते जब मैं कभी श्री अजीत कुमार के चेहरे पर दृष्टि डालता हूँ तो ऐसा लगता है कि वह सहज समाधि की अवस्था में मेरे वचनों को सुनकर मस्त हो रहे हैं। इसलिए जब मैं ग्रीन बे से अमेरिका के दूसरे नगरों में जाता हूँ तो श्री अजीत कुमार और उनका परिवार एक खास विरह महसूस करते हैं। जब तक मैं महीना या डेढ़ महीना, भारत के लिए रवाना होने से पहले अमेरिका के दूसरे राज्यों में सत्संग देता रहता हूँ तब तक प्रतिदिन अजीत कुमार परिवार मेरे से टेलीफोन पर सम्पर्क बनाये रखता है। उनके इस अगाध प्रेम और श्रद्धा के कारण उनके सभी काम अच्छी तरह से सम्पन्न होते रहते हैं।

इस परिवार का परम दयाल जी महाराज से भी बहुत गहरा सम्बन्ध रहा है। जब परम दयाल जी वहाँ रहते थे, तो बच्चों से बहुत प्यार करते थे। परम दयाल जी के परमधाम सिधारने के बाद में यह सुन्दर परिवार प्रेम और श्रद्धा की डोरी से मेरे साथ बँध गया है। इस बार मैं वहाँ पर केवल पाँच दिन रहा किन्तु इन दिनों हम सब श्री अजय कुमार के विवाह की तैयारी में व्यस्त रहे। याद

1986 में मैंने स्वयं श्री अजय कुमार की सगाई अमेरिकन लड़की कुमारी होली से कराई थी। कुमारी होली का परिवार भी श्रद्धा और प्रेम से ओत-प्रोत है। विवाह का आयोजन विस्कौन्सिन विश्व विद्यालय ग्रीन बे के Chapel (चैपल) बोनी के धार्मिक मन्दिर में आयोजित हुआ। इस आयोजन में कुमारी होली का अमेरिकन परिवार बहुत से दूसरे अमेरिकन इष्ट-मित्र और भारतीय परिवार शामिल हुए। तकरीबन तीन सौ व्यक्ति वहाँ विवाह पर मौजूद थे। इस विवाह में खास बात यह थी कि वर की ओर से मैंने सप्तपदी के आधार पर वेदमन्त्रों सहित यह शुभ कार्य करना था। वर-वधू की ओर से मैथोडिस्ट (Medhodist) सम्प्रदाय के पादरी ने ईसाई रीति के अनुसार वर-वधू की ओर से शपथ दिलानी थी। मैथोडिस्ट पादरी ने वर और वधू को शपथ दिलाई और उन दोनों ने एक-दूसरे को अँगूठी पहिनाई। किन्तु उन्हें विवाहित घोषित नहीं किया क्योंकि इससे पहले मुझे सप्तपदी की रीति से वर-वधू को परस्पर वचनबद्ध करना था। मैंने वर और वधू को सप्तपदी कराई। उससे पहले अजय की माता की ओर से विशेष दुपट्टा पहनाया गया और उस दुपट्टे से अजय के रुमाल को बाँध कर गठबन्धन की रस्म अदा की गई। सभी बारातियों ने इस रीति की सराहना की। मैंने वर और वधु को तीन जलती हुई मोमबत्तियों को मध्य में रख-कर सप्तपदी कराई। हर पद पर मनुस्मृति के अनुसार वर और वधू ने वचन दिये। मैंने पहले से ही सारी सप्तपदी की भाषा को अंग्रेजी भाषा में अनूदित कर दिया था और उसकी कुछ प्रतियाँ भी बाँट दी गई थीं। पहले मैं स्वयं वर या वधू की ओर से बोलता था उसके बाद वर या वधू उन शब्दों का उच्चारण करते थे। लोगों को यह जानकर

आश्चर्य हुआ कि ईसाई धर्म के अनुसार जो वचन वर और वधू ने दिये थे वे करीब-करीब सप्तपदी के वचनों का अनुवाद दिखाई देते थे। इस प्रकार सप्तपदी की सारी क्रिया बहुत पसन्द की गई। सभी लोगों ने मुक्तकंठ से कहा कि आज पूर्व और पश्चिम की संस्कृतियाँ मिल गई हैं। इसलिए सप्तपदी के बाद ही ईसाई पादरी ने अजय और होली को पति-पत्नी घोषित किया। विवाह के प्रमाणपत्र पर ईसाई पादरी के और मेरे हस्ताक्षर हुए।

यहाँ पर मैं अपने प्यारे सत्संगियों को यह बता देना चाहता हूँ कि मेरे अमेरिका निवास के दौरान मैं मुझे 1976 में "विश्व धर्म" का प्रमाणित पुरोहित घोषित किया गया था और नोर फोक, वर्जीनिया के न्यायालय से मुझे एक प्रमाण-पत्र दिया गया था। अमेरिका में कोई भी पुरोहित या पादरी अपनी मर्ज़ी से पति-पत्नी का विवाह नहीं करा सकता। पुरोहित या पादरी को विवाह के नियमों के अनुसार चलना पड़ता है। भावी पति-पत्नी डाक्टर से प्रमाणपत्र लाते हैं जिसमें यह लिखा होता है कि इन दोनों का खून स्वस्थ सन्तान पैदा कर सकता है। उस प्रमाण-पत्र के आधार पर धार्मिक विवाह-पद्धति के अनुसार विवाह की कार्यवाही कराई जाती है। पादरी या पुरोहित विवाह का प्रमाण-पत्र जारी करता है। उसकी एक प्रति विवाहित दम्पति को दी जाती है और एक प्रति न्यायालय में भेजी जाती है। मैंने 1976 से 1982 तक बहुत से अमेरिकन वर और वधू के विवाह सम्पन्न किये। वे सभी विवाहित दम्पति प्रेमपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे हैं। कट्टर से कट्टर ईसाई परिवारों ने भी सप्तपदी की क्रिया को अंग्रेज़ी भाषा में बदल कर प्रकाशित करा दिया है। दूसरे शब्दों में परम दयाल जी महाराज के शरीर में होते हुए भी मानव विवाह

...पर मैं यह कह देना चाहता
...पति-पत्नी एक दूसरे को यह वचन
...सन्तान पैदा करेंगे। सन्तान के लिए
...ना मानवता धर्म का पहला नियम है। इस
...पालन करने से स्त्री को केवल कामवासना का
...रया नहीं माना जाता। पति-पत्नी शिवसंकल्प करके
सन्तान पैदा करते हैं। ऐसा करने से आज्ञाकारी, सुशील, बुद्धिशाली और प्रेम से ओत-प्रोत बच्चे पैदा होते हैं। इस समय विश्व भर में परिवारों के अन्दर परस्पर झगड़े और क्लेश इसलिए हैं क्योंकि सन्तान के लिए सन्तान पैदा नहीं की जाती। इसलिए जब "मानवता विवाह" रीति को अपनाया जायेगा तो घरों में शान्ति बनी रहेगी। घरों की शान्ति से समाज की शान्ति और विश्व की शान्ति स्थापित हो जायेगी।

मैंने आपको श्री अजीत कुमार के सुपुत्र अजय कुमार के अमेरिकन कन्या होली से विवाह के सम्बन्ध में काफी कुछ बता दिया है। परम दयाल जी महाराज ने परमतत्त्व का अवतार होते हुए अमेरिका में महासमाधि लेकर यह साबित कर दिया कि पूर्व और पश्चिम में विरोध नहीं है। परमतत्त्व अवतार भारत में जन्म लेकर किसी भी देश में महासमाधि ले सकता है। मानवता धर्म बहुत व्यापक है; उसमें जाति-पाँति, मत-मतान्तर; देश-काल के भेद को मिटा दिया जाता है। जितनी ही अधिक मानवता धर्म के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय शादियाँ होंगी उतना ही अधिक जाति-पाँति और राष्ट्र-राष्ट्र का भेद मिटता चला जायेगा और एक दिन वेदों का यह वाक्य साकार हो जायेगा जिसमें कहा गया है :—

'उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।'

अर्थात् उदार चरित्र वाले लोगों के लिए सारी पृथ्वी एक परिवार है।

मेरे प्यारे सत्संगियो, इसी मानव-परिवार के लिए ही मैं देश-विदेश में परम दयाल जी महाराज की आज्ञा का पालन करते हुए सत्संग देता रहता हूँ इसी सम्बन्ध में मैं आपको विदेशी दौरे की सूचनाएं दे रहा हूँ। 18 मई को सायं-काल मैं श्री रमेश गोयल के साथ शिकागो पहुँचा और 20 मई को हम प्रातःकाल लासऐंजल्स, कैलीफोर्निया के लिए रवाना हो गये। यहाँ पर भी हमें अपने परम प्रिय सत्संगी स्वर्गीय श्री बली राम जी हकीम के पोते श्री अश्विनी कुमार के विवाहोत्सव पर मौजूद होना था। इस विवाह की विशेषता यह थी कि कन्या की ओर से आर्य समाज के पुरोहित ने और वर की ओर से मैंने इस शुभ विवाह को सम्पन्न किया। इसकी व्याख्या मैं आपको अगले मासिक सन्देश में दूंगा। अभी मैं वाणी के तप के सम्बन्ध में स्वाध्याय पर कुछ रोशनी डालूंगा।

वाणी के तप में स्वाध्याय का मतलब रूहानियत के साहित्य को पढ़ना है। वास्तव में जब व्यक्ति "गृहस्थ" आश्रम में प्रेम का अनुभव करके तीसरे आश्रम "वानप्रस्थ" में दाखिल होता है, तो उसे उस समय वेद-शास्त्रों और धार्मिक ग्रन्थों को पढ़ना चाहिए। सनातन धर्म के अनुसार जीवन के जो चार आश्रम बनाये गये हैं, उनके ज़रिये मनुष्य अपने आध्यात्मिक लक्ष्य पर, यानि कि मोक्ष की हालत पर पहुँच सकता है। सनातन धर्म एवं उस आर्ष धर्म के अनुसार, जिसे भूल से हिन्दु धर्म कहा जा रहा है, हर एक व्यक्ति सौ वर्ष तक जी सकता है। इसलिए हर मनुष्य को चार आश्रमों से गुज़रना पड़ता है। यहाँ पर 'आश्रम' शब्द का मतलब समझना ज़रूरी है। आश्रम शब्द आ+श्रम, दो

स बना है। 'आ' का अर्थ है आत्या और 'श्रम' का अर्थ प्रयास या मेहनत। इस प्रकार आश्रम का अर्थ आत्मा की पूर्णता को पाने के लिए प्रयास करना या कर्म करना है। ये चार आश्रम इस प्रकार हैं :—(1) ब्रह्मचर्य आश्रम अथवा वह अविवाहित अवस्था जिसमें विद्या सीखी जाती है, (2) गृहस्थ आश्रम अथवा विवाहित जीवन की अवस्था, (3) वानप्रस्थ आश्रम, अथवा तटस्थ रहने की अवस्था, जिसमें गृहस्थ में रहते हुए भी उसमें आसक्ति न हो, (4) संन्यास आश्रम अथवा अनासक्त और जीवन्मुक्त अवस्था। ब्रह्मचर्य अवस्था पच्चीस वर्ष तक रहती है। यह अवस्था पूरी तरह से तप: की अवस्था है। इस अवस्था में छात्र एवं शिष्य को गुरु के आश्रम में उस समय तक शरीर और मन का अनुशासन करते हुए गुरु के पास रहना पड़ता है, जब तक कि उसकी शिक्षा पूरी न हो जाये। प्राचीन काल में शिष्य को अपनी ज्ञानेन्द्रियों और मन पर काबू रखते हुए पूरी तरह से शिक्षा में रत रहना पड़ता था। मैं आपको इस अनुशासन और तप: का एक उदाहरण देना चाहता हूँ।

एक नवयुवक को एक ऋषि के आश्रम में बारह वर्ष तक व्याकरण की पूर्ण शिक्षा के लिए रहना पड़ा। उसने इस दौरान में अनुशासन का पालन किया। वह गुरु के आश्रम में गुरु के परिवार को गेहूँ उगाने, सब्जियों को उगाने में और जंगल से ईंधन के लिए लकड़ियाँ लाने में मदद करता रहा। गुरुपत्नी सभी शिष्यों के लिए खाना बनाती थी इसलिए उसे आश्रम-माता कहा जाता था। 12 वर्ष की शिक्षा के बाद गुरु ने उसे कहा "मेरे प्यारे बेटे! तुम्हारी शिक्षा पूरी हो गई है और मैं आज तुम्हें व्याकरण का स्नातक घोषित करता हूँ।" वह नौजवान बहुत प्रसन्न हुआ और दूसरे दिन घर लौटने की तैयारी में मग्न हो गया।

लेकिन रात्रि को वह आश्रम-माता के रसोई घर में हर रोज की भाँति खाना खाने के लिए गया। ज्यों ही उसने साग के साथ रोटी का पहला लुकमा खाया, उसने आश्रम-माता को बहुत नम्र शब्दों में कहा, "मेरी पूज्या माता जी, ऐसे लगता है कि आज आप साग में नमक डालना भूल गई हैं। आश्रम-माता ने फौरन जवाब दिया "मेरे प्यारे बेटे! मुझे पूरा विश्वास है कि आज तुम्हारी शिक्षा पूरी हो गई है और तुम स्नातक बन गये हो।" छात्र ने कहा "प्यारी माता जी! बिना नमक के साग का मेरे स्नातक होने का क्या सम्बन्ध है' आश्रम-माता ने उत्तर दिया "मेरे प्यारे बेटे! पिछले 12 वर्षों से तुम मेरे से बना या हुआ साग खाते रहे हो। मैंने इस दौरान में साग में कभी नमक नहीं डाला तुम पढ़ने-लिखने में इतने मग्न थे कि तुमने कभी इस तरफ ध्यान नहीं दिया। क्योंकि आज तुम्हारा ध्यान इस तरफ गया है और तुमने महसूस किया है कि साग में नमक नहीं है, इसलिए मैंने यह अनुमान लगाया है कि तुम्हारी शिक्षा पूरी हो गई है।" ब्रह्मचर्य आश्रम में रहते हुत इस प्रकार का शारीरिक और मानसिक अनुशासन अपनाना पड़ता था।

इसके पश्चात् 25 वर्ष गृहस्थ आश्रम में बिताने पड़ते थे; जिसमें पत्नी, बच्चों और दूसरे सम्बन्धियों के प्रेम का अनुभव करना पड़ता था। इसके बाद व्यक्ति तीसरी वान-प्रस्थ अवस्था में प्रवेश करता था। इस अवस्था में उसे फिर धार्मिक साहित्य की ओर और आध्यात्मिक अनुशासन का अभ्यास करते हुए मन को एकाग्र करना पड़ता है। वास्तव में यह अवस्था शिक्षा की दूसरी अवस्था है इस अवस्था में धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन घर में होता है और उसे (अध्ययन को) परिवार के दूसरे सदस्यों से बाँटना पड़ता है। इसके साथ ही साथ वह गुरु के सत्संग में भी जाता है और

..र्ता आदि सुनता है।

ब्राह्मण लोग हमेशा समाज की आध्यात्मिक ज़रूरत को पूरा करने के लिए धर्मग्रन्थों का पाठ करते रहते थे और मालिक से मिलने के योग की शिक्षा देते थे। किन्तु समय गुज़रने के बाद ब्राह्मण लोग अपने इस कर्त्तव्य को लापरवाही से करने लगे। उन्होंने धार्मिक ग्रन्थों, वेदों को पढ़ने और नैतिकता सिखाने को अपना धन्धा बना लिया और केवल पैसे लेकर ही वे यह काम करने लगे। वे खासकर विवाह, उपनयन, नवशिशु के जन्म और मृत्यु आदि के अवसर पर पैसा लेकर यह काम करने लगे। उसका परिणाम यह हुआ कि स्वाध्याय का असली मतलब लुप्त हो गया। सन्तमत अथवा राधास्वामी मत ने इस स्वाध्याय को सत्संग का रूप देकर पुनर्जीवित कर दिया। इस प्रकार राधास्वामी मत सनातन धर्म का नया रूप है। इसमें खूबी यह है कि सत्संगी अनपढ़ होते हुए भी स्वाध्याय का लाभ उठा सकते हैं। वे सद्गुरु के सत्संग को सुनकर रूहानियत में तरक्की कर सकते हैं। क्योंकि सद्गुरु अपने अनुभव को सत्संगियों से बाँटता है। इस प्रकार सबसे ऊँचा स्वाध्याय अर्थात् सबसे ऊँचा वाणी का तप सत्संग में सहज में मिल जाता है।

इसीलिए ही सन्तमत में और खासकर सुरत-शब्द योग में सत्संगी के लिए हर अवस्था पर सद्गुरु के सत्संग से लाभ उठाना बहुत ज़रूरी है। गोस्वामी तुलसी दास जी सत्संग की इस महिमा को बताते हुए कहा है :—

"सब ही सुलभ सब दिन सब देसा।
सेवत सादर समन कलेसा ॥"

सत्संग एक ऐसा अनुशासन एवं तप है जो हर व्यक्ति को बिना जाति, धर्म आदि के भेदभाव के, हर समय हर स्थान पर सहज में प्राप्त हो सकता है। इतना ही

नहीं बल्कि अदब के साथ सत्संग सुनने वाला संसार के सभी कष्टों से आज़ाद हो सकता है। उपनिषद् काल में भी ऋषि लोग बिना किसी जाति-पाँति के भेदभाव के दीक्षा दिया करते थे। उनका दृष्टिकोण बहुत व्यापक था। सन्त-मत ने उसी प्रथा को कायम ही नहीं रखा बल्कि उसको और भी सहज बना दिया। सत्संग में आने के लिए किसी प्रकार के रीति-रिवाज की ज़रूरत नहीं है और न ही सत्संग किसी विशेष उत्सव के दिन दिया जाता है। लोग सत्य-नारायण की कथा केवल पूर्णमासी के दिन ही सुनते हैं। इसी प्रकार मुसलमान केवल रमज़ान के महीने में ही व्रत रखा करते हैं किन्तु सद्गुरु के सत्संग को सुनने के लिए किसी तिथि, वार या समय का बन्धन नहीं है। एक सच्चे धर्म का मक़सद सत्संगी को परम दयाल पुरुष से साक्षात् मिला देना है और उसे देश, काल के सभी बन्धनों से आज़ाद कर देना है। सत्संग के अन्दर यह उदारता आध्यात्मिक अनुशासन को सहज बना देती है और सत्संगी को सहज में ही सहज सुरत-शब्द योग से निजधाम मिल जाता है। यह समाधि भी सहज समाधि होती है और सत्संगी को पूर्णता मिल जाती है। किन्तु इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि इस सहज योग को सीखने और उसका अभ्यास करने के लिए सत्संगी के मन में सद्गुरु के प्रति उसे परमतत्त्व मान कर ही आदर होना चाहिए। गुरु के प्रति आदर और सम्मान उस परम प्रेम की निशानी है जिससे प्रभावित होकर परम-तत्त्व का अवतार सद्गुरु सत्संगी को नामदान दे देता है। गुरु को केवल नमस्कार करने मात्र से भी सत्संगी का झूठा अहंकार समाप्त हो जाता है और परमतत्त्व आधार का अहंकार उसका अहंकार बनकर बिना किसी प्रयास के सत्संगी की सभी आवश्यकताओं को पूरा कर देता है।

सत्संगी की इस व्याख्या को वाणी के तप से बताने के बाद मैं इस मासिक सन्देश को यहीं पर समाप्त करता हूँ। मैं सच्चे दिल से चाहता हूँ कि आप सब को स्वास्थ्य, सम्पन्नता, शान्ति और पूर्णता मिले। मैं आप सबको सच्चे दिल से आशीर्वाद और प्रेम की भेंट करता हूँ।

आपका फकीरमय
मानव

अति आवश्यक सूचना

सब सत्संगियों को सूचित किया जाता है कि 5 सितम्बर 1987 को मानवधाम का उद्घाटन और शिलान्यास प्रातः 9 बजे परम सन्त हजूर मानव दयाल जी महाराज के कर-कमलों द्वारा होगा। मानवधाम का स्थान दिल्ली से मोदी-नगर जाते हुए मेरठ रोड पर बाएँ हाथ को दिल्ली के 27 वें किलोमीटर के निशान पर है जो I.T.I संस्था के पास हैं। दुहाई गाँव का बस स्टाप मानवधाम से एक किलोमीटर मोदी नगर की ओर है। आप दुहाई बस स्टाप पर पहुँच जायें वहाँ पर आपको हमारे आदमियों से सब सूचना मिल जायेगी। वहाँ मानवधाम का बोर्ड भी लगा होगा। शिलान्यास प्रातः ठीक नौ बजे होगा और सत्संग ग्यारह बजे तक चलेगा। आप सब को सप्रेम आमन्त्रित किया जाता है। सब को हल्वे का प्रसाद प्रेम से बाँटा जायेगा।

ऋषि प्रकाश गुप्त
जनरल सेक्रेटरी
अन्तर्राष्ट्रीय मानवता सोसाइटी (रजि०)
दिल्ली।

शुभ सूचना

मानवता धर्म का विश्व व्यापा प्रसार

परम सन्त परम दयाल मालिके कुल पं० फकीर चन्द जी महाराज ने सन् 1962 में होशियारपुर में मानवता मन्दिर की स्थापना की ताकि यह स्थान मानवता के परम उद्देश्य के प्रसार के लिए एक केन्द्र बन जाये। इसमें सन्देह नहीं कि यह स्थान उस मानवता धर्म के प्रसार के लिए एक ऐसा स्थाई आध्यात्मिक केन्द्र रहेगा जहाँ से यह धर्म सारे विश्व में फैल रहा है। मानवता मन्दिर के अनेक केन्द्र तथा अन्तर्राष्ट्रीय मानवता सोसाइटियाँ रजिस्टर्ड संस्थाओं के रूप में सत्य और आध्यात्मिक मानववाद के प्रसार के लिये पिछले पाँच वर्षों से भारत और दूसरे देशों में स्थापित हो चुकी हैं।

दिल्ली में करीब एक वर्ष पूर्व अन्तर्राष्ट्रीय मानववादी समाज (रजि०) संस्था की स्थापना एक केन्द्रीय संस्थान के रूप में सभी मानवाता संस्थाओं क विकास और उनकी गति-विधियों को समन्वित करने की दृष्टि से की गई हैं। इन गतिविधियों में सामजिक, शैक्षणिक और आध्यात्मिक संस्थाओं की स्थापना करना और इस केन्द्रीय संस्थान के तत्वावधान में अन्तर्राष्ट्रीय संत-सम्मेलन, सत्संग और गोष्ठियाँ करना शामिल हैं। इस संस्था का पहला सफल प्रयास एक ऐसा नगर बसाना हैं जिसका नाम "मानव धाम" रखा गया है, जिसका उद्घाटन तथा शिलान्यास परम संत परम मानव हजूर मानव दयाल जी महाराज के कर-कमलों द्वारा अगामी 5 सितम्बर, (जो सन् 1921 में उनके प्रगट होने का दिन है) 1987 को सम्पन्न हो रहा है। इस नगर में मानवता मन्दिर, फकीर आडिटोरियम, फकीर लायब्रेरी और फकीर मन्दिर

...कार्य के लिये गाजियाबाद के निकट
... मुख्य मार्ग से लगी हुई जमीन खरीद
...गियों ने यहाँ बसने का निश्चय किया
...ये जायेंगे ।

होशियारपुर में अनेक दानी सज्जनों
...के खर्च से कमरे बनवाये हैं । अगर
मानवता धर्म के सत्संगी और समर्थक यह मानते हैं कि मानव-धाम का यह केन्द्रीय संस्थान परम सन्त हजूर परम दयाल जी महाराज, दाता दयाल जी महाराज और हजूर मानव दयाल जी महाराज के अनुभवों पर आधारित सत्य और आध्यात्मिकता के प्रसार में मदद देगा, तो हम आशा करते हैं कि सभी लोग यथा शक्ति अपनी श्रद्धानुसार मानवता धर्म के विश्व में प्रसार की दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय मानवता सोसाइटी को अनुदान करेंगे । मानव धाम में बाहर से आने वाले सत-संगियों के लिये वहाँ के मानवता मन्दिर में बारह महीने ठहरने और खाने की वह सभी सुविधायें मिलेंगी जो होशियारपुर के मानवता मन्दिर में मिलती हैं ।

मैं सच्चे दिल से आशा रखता हूँ कि मेरी यह अनुदान की प्रार्थना सभी को अच्छी लगेगी । कमरे या भवन निर्माण के लिये अनुदान देने वाले सज्जन या उनके सम्बन्धियों के नाम स्मृति-पत्थर भी लगाया जा सकता है । किन्तु हम यह चाहते हैं कि हर एक व्यक्ति अपनी शक्ति के अनुसार जो भी छोटी से छोटी धन-राशि इस शुभ कार्य में अनुदान रूप में भेज सकें, हम उसका हृदय से स्वागत करेंगे ।

धन-राशि बजरिये ड्राफ्ट या चैक जनरल सेक्रेटरी,

इण्टरनैशनल सोसाइटी आफ ह्यमनिज़म (रजि०), दिल्ली के नाम से नीचे दिये गये पते पर सीधे भेजनी चाहिये।

श्री ऋषि प्रकाश गुप्ता
O/41, विजय विहार, उत्तम नगर,
नई दिल्ली-112059

निवेदक :- एस. एल. सेठी
जनरल सेक्रेटरी, मानवता मन्दिर,
होशियारपुर।

मेरे गुरु-देव मेरे आराध्य

जड़-चेतन जीव-जगत् में प्रत्येक तत्व, प्रत्येक प्राणी, अपना एक गुण-धर्म अपनी एक विशेषता रखता है। हर कली मुर्झाने से पहले खिल कर अपना सुगंध बिखेर जाती है, हर दीपक बुझने से पहले एक नये दीपक को प्रज्वलित कर जाता है और हर आत्मा शान्त होने से पहले अपने आत्मज को सुस्थापित कर जाता है। सन्त सद्गुरु वक्त भी अपनी खाकी चादर उतारने से पहले भावी सन्त सद्गुरु वक्त के अन्तर्निहित सन्त सद्गुरु तत्व को जगा कर अपना पारमार्थिक उत्तराधिकार उसे सौंप जाता है।

परम संत पद्म दयाल जी महाराज अपना लाल-कमल सा तेजस्वी पार्थिव शरीर त्यागने के कई दशक पूर्व से ही अपनी आध्यात्मिक ज़िम्मेदारी सौंप जाने के लिये किसी एक उपयुक्त सुपात्र उत्तराधिकारी की तलाश में चिंतित रहने लगे थे। इस दृष्टि से उन्होंने क्रमशः कई एक व्यक्तियों को चुना और

मासिक—

मानव मन्दिर

विश्व में मानव मात्र के सामाजिक सांस्कृतिक
और आध्यात्मिक कल्याण और विकास की
सेवा में संलग्न मासिक पत्र

सम्पादक :
डा० परस राम अग्रवाल

वर्ष 14	सोमवार 10 अगस्त 1987	संख्या 4

सत्संग हजूर दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज

शिवजी के मुंडमाल की व्याख्या

कैलाशपति अपनी अर्द्धांगिनी उमा के साथ कैलाश में बैठे हुए थे। चन्द ऋषि उस जगह उनके दर्शन के लिए गये, नमस्कार करके बैठ गये। गले की माला पर नज़र पड़ी। उसमें (एक सौ आठ) दाने खोपड़ियों के पड़े हुए थे। शिव भगवान् से प्रश्न किया—आपने अपने गले में जो माला डाल रखी है इसमें (एक सौ आठ) दाने क्यों है? कमोवेश (कम या ज़्यादा) क्यों नहीं हैं? अगर कष्ट न हो तो इसका कारण हमें बता दिया जाये।

शिवजी उनसे कहने लगे—"मेरे शरीर के अन्दर द्वादश चक्र-द्वादश लिङ्ग और द्वादश अर्क हैं। इनके अन्दर नौ किस्मके तत्त्व या अन्सर भरे हुए हैं। ये शक्तियां कहलाती हैं। बारह को नौ से गुणा करो उसका नतीजा एक सौ आठ होता है। चूंकि इन शक्तियों में परिवर्तन होते रहते हैं और ये श्री का रूप होती हैं। जिसे दुनिया अकबालमन्दी—बेहतरी और खुशी की तसावीर (शक्ल) समझती है और बदलती रहती हैं। यकसां (एक जैसी) अवस्था में कभी नहीं रहती। इस वास्ते मैंने इनकी खोपड़ियों के दानों की माला बना

रखी है और ये मेरे गले की ज़ीनत (शोभा) समझी जाती हैं।"

ऋषियों ने प्रसन्नता प्रकट की। उनसे पूछा कि तत्त्व क्या हैं ?

आपने उत्तर दिया "मैं सरल भाषा में तुम्हें जवाब दूं या कठिन भाषा में ?" ऋषियों ने कहा "भाषा ऐसी हो जो सरलता से समझ में आ जावे। आपके साथ बहस-मुबाहसा (वादविवाद) के लिए नहीं आये हैं सिर्फ मामूली सवाल लेकर आये हैं और अपना इतमीनान (सन्तुष्टि) चाहते हैं। शिवजी हँसे और बोले "कुदरत में (नौ) तत्त्व हैं—1. सत्, 2. सत्ता, 3. सूर्य, 4. चांद, 5. मंगल, 6. बुध, 7. बृहस्पति, 8. शुक्र, 9. शनि—ये एक दूसरे से मिलजुल कर, बदल-बदल कर खास किस्म की सूरतें बना-बना कर अपना खेल करते रहते हैं। सत् असल चीज़ है वही असल जौहर है। कोई उसे आत्मा कहता है कोई ब्रह्म बताता है और कोई कुछ का कुछ कहता है। लफ़्ज़ों पर अड़ने की जरूरत नहीं है असलियत की तरफ निगाह होनी चाहिए। इस सत् से जो धार निकलती है उसका नाम "सत्ता" है। वह अक्स महज़ (छाया की तरह) है। सत् की छाया है। यह धार गोल दायरों की शक्ल में चक्कर खाती हुई आठ किस्म की सूरतें बनाती है। आधार तो जो कुछ है वही है। इसमें परिवर्तन नहीं आता। इस आधार से जो धार बरामद होती जाती है इसमें आने या जाने की ताक़त है वो आठ सूरतों में ज़ाहिर होती रहती है। सत् से सत्ता प्रकट हुई। इस सत्ता ने सत् के आधार से खास किस्म की ताक़त हासिल की। उससे जो पहला ज़हूर हुआ उसका नाम "सूरज" है। यह सूरज प्राण का भण्डार है। प्राण रचना में पहिला जौहर है। जहाँ असल है वहाँ नकल का रहना लाज़मी (ज़रूरी) है। कुदरत में

राधिकार सम्हालने का अवसर दिया; लेकिन परीक्षा हर एक ने उन्हें निराश किया और उनकी चिंता बढ़ती गई।

'नर का चेता होत नहिं, प्रभु चेता तत्काल।'

आधुनिक सभ्यता में किसी देश के राष्ट्राध्यक्ष को राष्ट्र का प्रथम नागरिक होने का विशेष सम्मान प्राप्त होता है। मसलन, अमरीका के राष्ट्रपति को अमरीका के प्रथम नागरिक का दर्जा हासिल होता है। ऐसे ही भारत का राष्ट्रपति भारत का प्रथम नागरिक होता है। राष्ट्र के प्रथम नागरिक को राष्ट्र का सर्वोच्च सम्मान दिया जाता है। किन्तु संसार में कुछ ऐसे भी महान् पुरुष होते हैं जिन्हें विश्व नागरिक का विशेष दर्जा और सम्मान प्राप्त होता है। महात्मा गांधी उन्हीं महान् पुरुषों में एक थे। उन्हें 'भारत का मुक्ति-दाता, मानवता का त्राता और विश्व-नागरिक' (Liberator of India, benefector of Humanity, and citizen of the world) कहलाने का गौरव प्राप्त हुआ।

यद्यपि ऐसे विश्व-नागरिकों की संख्या बहुत ही थोड़ी होती है; तथापि उनका दर्जा अति महान् होता है और मुझे यह कहते विशेष गर्व का अनुभव होता है कि सन् 1961 तक श्रीमान् डाक्टर ईश्वर चन्द्र शर्मा जी साहब बहादुर विश्व-नागरिकों में प्रथम नागरिक (First citizen of the world) होने की महिमामयी अवस्था प्राप्त कर चुके थे ऐसे महान् विभूति पर प्रथम दृष्टि पड़ते ही परम सत परम दयाल जी महाराज की परम तत्त्वदर्शी दृष्टि ने उनके अवतारी व्यक्तित्व को पहचान लिया और सहज विह्वलता से पुकार उठे, "शर्मा दि ग्रेट! मुझे तुम्हारी तलाश थी; मैं तुम्हारी इन्तजार में था।"

होते वाले सन्त सद्गुरु को संत सद्गुरु वक्त ही पहचानता

... ...हित सन्त सद्गुरु तत्व का ...
महत्तम जिम्मेदारी उस पर होती है। और यही कारण है
कि पंचानबे वर्ष की वयोवृद्ध अवस्था तक, चिकित्सकीय
निषेध के बावजूद, परम दयाल जी महाराज बारम्बार
अमरीका की श्रमकर यात्रा पर जाते रहे और उस निषिद्ध
भूमि में ही अपनी दिव्य ख़ाकी चादर उतारने से पूर्व वे परम
सन्त परम मानव हजूर मानव दयाल जी महाराज को अपना
आध्यात्मिक उत्तराधिकार सौंप कर परम तत्व में विलीन
हो गये और आदि सन्त कबीर की भांति, एक बार पुनः
मानवमात्र को रूढ़याग्रह के विरुद्ध सचेत कर गये कि परम
तत्वाधार मालिक की दृष्टि में काशी-मगहर या भारत
अमरीका की भूमि में कोई रूहानी तफ़र्क़ नहीं है :

'मोको कहाँ ढूंढ़े बन्दे, मैं तो तेरे पास में ॥
ना मैं काशी ना मैं मथुरा, ना कावा कैलास में।
ना मैं मसजिद ना मैं मन्दिर, ना मैं धरनि अकास में ॥
खोजी होय तुरंतहि मिलिहो; पल भर की तालास में।
कहत कबीर सुनो हो संतो, मैं साँसों की सांस में ॥

इस प्रकार वह अमर ज्योति शान्त होने से पूर्व अमर ज्योति जगा गई। पर क्या हम ने कभी कल्पना की कि यदि परम संत हजूर परम दयाल जी महाराज और परम संत हजूर मानव दयाल जी महाराज का यह सुसंयोग न हुआ होता तो परम दयाल जी महाराज द्वारा घनघोर तप, सच्चाई परम दया प्रेम और मानवता के आधार पर स्थापित वह मानवता मंदिर, रूहानियत की वाहित दूकान, वहदानियत की जाम पिलाने वाला वह मैक़दा हमेशा-हमेशा के लिए बन्द हो गया होता, भारत की ऋषि-गुरु परम्परा से चलता आया जगद्विख्यात आध्यात्मिक विश्व विद्यालय सदा-सर्वदा

…हजूर मानव दयाल जी
…परम दयाल जी महाराज की
…का। वाहिद दूकान 'मानवता मंदिर' के रूहानी लालो गौहर की ज्योति से सम्पूर्ण विश्व को प्रकाशित कर दिया, ऋषियों-संतों के हजारों वर्षों के निरन्तर तप-साधना द्वारा शोधित-विकसित आध्यात्मिक मानववाद (मानवता) के अमर सन्देश को संसार में उजागर कर दिया। ऐसे है हमारे गुरु-देव, हमारे आराध्य परम तत्वावतार परम संत परम मानव हजूर मानव दयाल जी महाराज।

प्रार्थना

राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
अलख अगम और अनामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
परम, सन्त का रूप धरा, जीवों पर उपकार किया।
सीधा सच्चा मार्ग दिया, आये ध्रुव पद धामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
बन कर आये परम फ़कीर, हरने सब जीवों की पीर।
परम दयालु दानी वीर, नाम दान के दानी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
राम भी हो और कृष्ण भी तुम।
तुम महावीर और बुद्ध गौतम।
अक्षर ब्रह्म और पुरुषोत्तम, सब नामों में अनामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
मानवता का किया प्रचार, निज अनुभव का दे दिया सार।
ऐसे गुरु को बारम्बार, नमामि नमामि नमामि।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।
दाता दयाल के प्यारे तुम मानव के रखवारे तुम।
निर्गुण और सगुण भी तुम, सब के अन्तर्यामी।
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी।

174 AUGUST 10th 1987

NWHSP—7

Address

To

415 President Radha-Swami
Sat Sang PITLAM
Distt. Nizamabad (A.P.)

Phone : 2022

From

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR-146001.

Shiv Dev Rao Press, Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb.)